श्रीजनकपुर पहुँचे उसी दिन विवाह पंचमी थी। अतएव आपने अग्निकुंड श्रीवैदेहीशरणजी के स्थान पर आसन किया। और सब कृत्य से निवृत्त होकर श्रीमहात्माजी सुर-संड के राजा के एक बड़े हाथी पर सवार होकर वहाँ पर गए जहाँ पर विवाह का परिछन हो रहा था। वहाँ पर आप विवाह का कौतुक देखने लगे। उसी समय श्रीरामनगर (काशी) के स्वरूप वहाँ पर आए। उन्हें देखकर श्रीमहात्माजी ने उन्हें अपने हाथी पर बैठा लिया। फिर बारात देखते हुए श्रीरामजी की पालकी के पीछे बारात के साथ साथ चले। और श्री-जानकी मंदिर पहुँचे। श्रीमहात्माजी का हाथी फाटक से होकर भीतर चौक में गया। और पंद्रह हाथी भी आपके साथ ही भीतर गए। और एक पंक्ति में खड़े हो गए। श्रीरामजी की आरती होने के पश्चात् सभी लोग अपने स्थान पर गए। दूसरे दिन श्रीरामबहादुरशरणजी की ओर से श्रीजनकपुर-वासी महात्माओं का भंडारा हुआ। तीसरे दिन श्रीमहात्माजी श्री-धनुषजी के दर्शन करने गए। श्रीधनुषजी का दर्शन और पूजन बड़े प्रेम से किया। वहाँ से लौटने पर श्रीबिहारकुंड के महात्माओं ने आपको निमंत्रण दिया। इसके बाद आप सीतामढ़ी लौट आए। वहाँ से श्रीअहिल्योद्धरण ठाकुरजी के दर्शन करने गए। यहाँ पर आपके एक गुरुभाई श्रीललित-किशोरीशरणजी* रहते थे जिस समय दोनों गुरु भाइयों का

---

* आप चारों वेद और छहो शास्त्र के वक्ता थे। ऐसे विद्वान् प्रायः कम देखने में आते हैं। आप पुस्तक के पंडित नहीं थे। आपको सभी ग्रंथ कंठाग्र थे। और किसी विषय पर चर्चा चलने पर कहते थे अमुक ग्रन्थ के अमुक पृष्ठ

मिलाप हुआ उस समय श्रीभरत मिलाप के समान आनंद हुआ। वहाँ पर एक रात्रि निवास कर आप सीतामढ़ी लौट आए। यहाँ से कुछ दूर एक और गुरु भाई जमींदार गृहस्थ श्रीजगन्नाथप्रसादसिंह बुलाकीपुर में हैं आप उनके यहाँ गए। वहाँ पर आपका बड़ा स्वागत-पूजन हुआ। वहाँ कुछ लोग आपके शिष्य भी हुए। वहाँ से मौजा अदौरी में गए। वहाँ बाबू नाथप्रसादसिंह† के यहाँ ठहरे। यहाँ पर आपका बहुत सत्कार हुआ।

---

पर ऐसा लिखा है। विरक्त तो ऐसे थे कि महाराज दरभंगा के कई बार बुलाने पर भी आप उनसे मिलने नहीं गए। अब इनका शरीर नहीं है।

† ये बड़े संत-सेवी हैं और इनके यहाँ से बहुत सा गल्ला श्रीअवध में सन्तों के लिये आता है। ये घोर मांसाहारी थे। महात्माजी के जाने पर इन्होंने हिंसा के पक्ष में विद्वानों की एक सभा की। उस सभा में श्रीमहात्माजी के समक्ष किसी की एक न चली और अहिंसा का प्रस्ताव पास हुआ तथा उनके भाई राघवप्रसाद सिंह उनके पुत्र संजीवनप्रसादसिंह आदि शरणागत हुए। पर बाबू साहब हिंसा ही के पक्ष में रहे। महात्माजी ने कहा कि तुम भी घूमकर इसी मार्ग पर आओगे। और वही बात हुई। संवत् १९८६ में वे मंदिर आए। उस समय महात्माजी अपने आसन पर थे। खबर मिली कि अदौरी के बाबू नाथप्रसाद सरकारी दर्शन को आए हैं। सरकार मंदिर चलें। आप मंदिर आए। और इतने में बा० नाथप्रसाद माथे में त्रिपुंड धारण किए और गले में रुद्राक्ष की माला पहरे साथ में राघवप्रसादसिंह और संजीवनप्रसादसिंह और कई आदमियों पर भेंट का सामान लिये आए। और महात्माजी को साष्टांग दंडवत किया। हाथ जोड़कर सामने बैठे। महात्माजी ने कहा—सब अच्छा है? उन्होंने कहा सब सरकारी कृपा है। आपने मुस्कुराकर कहा कि अब क्या है? बा० साहब ने कहा—सरकार की जो आज्ञा। आपने कहा कि हमारी आज्ञा क्या? जो तुम्हारी इच्छा होगी वही होगा। उन्होंने कहा—अब उद्धार किया जाय। आप हँसे और कहा—आए ठिकाने? डलिया मँगवाई और शरणागत

यहाँ से श्रीरामबहादुरशरणजी श्रीमहात्माजी को अपने ग्राम छपरा में लिवा लाए। यहाँ भी आपका स्वागत-सम्मान हुआ। बहुत से क्षत्रिय वैष्णव बने। यहाँ से डुमरी, मथौल एवं लेखक की जन्मभूमि हँसवारा आए और ठाकुरबाड़ी में एक रात्रि निवास कर मीनापुर होते हुए सीतामढ़ी लौट आए। यहाँ श्रीसियाविहारीशरणजी के मंदिर में आपका निमंत्रण हुआ। यहाँ पर आपका पूजन और सत्कार हुआ। इसके बाद आप मुजफ्फरपुर आए। यहाँ पर श्रीमहात्माजी को अनेक प्रकार की चीजें पूजा और भेंट मिलीं। यहाँ से श्रीपरात्पद गुरु के स्थान चिरान * को गए। श्रीरसिकशिरोमणि ठाकुरजी के दर्शन

---

किया। उस समय श्रीराघवप्रसादसिंह और श्रीसंजीवनसिंह मुख को रुमाल से छिपाए हँस रहे थे। शरणागत होने पर उन्होंने पूछा कि इन मालाओं को क्या करें? उन्होंने कहा कि जो इनके चाहने वाले हों उन्हें दे देना। कुछ दिन श्रीअवध रहकर घर चले गए। और संवत् १९८७ में झूलनोत्सव देखने के लिये पुनः आए। यहाँ आने पर बहुत बड़ा कारबंकल हुआ। फैजाबाद के सिविल सर्जन ने आपरेशन करने से इनकार किया क्योंकि बाबू साहेब की अवस्था ७० के लगभग थी। कमजोरी अधिक थी। उस समय श्रीअवध में प्रभु दयाल श्रीवास्तव नामक एक नए डाक्टर अयोध्या अस्पताल आए थे वे महात्माजी का दर्शन करने आते थे। महात्माजी ने उनसे आपरेशन करने के लिये कहा तो उन्होंने उत्तर दिया मैं अभी एकदम नया हूँ और तीन मास के लिये नौकर होकर आया हूँ। सिविल सर्जन ने इनकार कर दिया है। अतः केस खराब होने से हमारी बदनामी होगी। महात्माजी ने कहा—नहीं बच्चा, तुम हमारे अनुरोध से आपरेशन करो, तुम्हें यश मिलेगा। महात्माजी का कहना मान उन्होंने आपरेशन किया और वह कारबंकल उनके अयोध्या में रहते हुए ही अच्छा हो गया। इससे प्रभुदयाल श्रीवास्तव को तरक्की मिली। बाबू नाथ प्रसादसिंह अभी जीवित हैं।

* छपरा से पूर्व और दक्षिण कोण में पाँच छः मील पर श्रीसरयूजी के तट पर बसा हुआ है। और वहाँ यह स्थान बड़ी मठिया के नाम से प्रसिद्ध है।

कर अत्यंत आनंदित हुआ। वहाँ पर आपने लोगों से अपने पर-दादा गुरुजी के गुरु श्रीशंकरदासजी का वृत्तांत पूछा तो उन्होंने जो कुछ बताया उसे हम यहाँ लिखते हैं।

अनंत श्री केवल कूवारामजी महाराज के शिष्य श्रीदामोदरदासजी श्रीदामोदरदासजी के श्रीहृदयरामजी और श्रीहृदयरामजी के शिष्य श्रीकृपारामजी हुए। वे घूमते हुए गंगा और सरयू के मध्य स्थान छपरा में रहने लगे। श्रीकृपारामजी महाराज के रत्नदासजी और श्रीरत्नदासजी के श्रीनृपतिदासजी हुए श्रीनृपतिदासजी के ही कृपापात्र श्रीशंकरदासजी हुए। आपने श्रीशंकरदासजी महाराज को चरणामृत लेते समय कान में मंत्रोपदेश दिया था। यह देखकर उनके अधिकारी श्रीहरिदासजी ने शंका की कि ऐसा क्यों किया ? इसके उत्तर में श्रीनृपतिदासजी महाराज ने कहा कि ये श्रीशंकरजी के अंश से हैं। ये नाद और विंदु (विरक्त और गृहस्थ) दोनों शाखाओं के प्रवर्त्तक होंगे इसमें तनिक भी संदेह न करो। यह संवाद सुनकर श्रीशंकरजी ने कहा कि जब आपने शिष्य बनाया है तो कुछ दया कीजिए। इसके उत्तर में महाराज ने कहा कि दया उन्हीं की समझो जो कि गो चराने के समय तुम्हें मिले थे। इसके बाद श्रीशंकरजी घर चले आए।

श्रीयुत पं० शोभारामजी चौबे एक बड़े ज्योतिषी तथा रामभक्त थे। उनकी छोटी स्त्री से श्रीशंकरजी की उत्पत्ति हुई। श्रीशंकर का अंश समझकर उनके पिता ने इनका नाम श्रीशंकर रखा। कुछ दिनों के पश्चात् श्रीसीताराम नाम का उच्चारण करते हुए आपका शरीर छूट गया। कुछ काल बाद श्रीशंकरजी

का यज्ञोपवीत संस्कार हुआ। आप पढ़ने के लिये बैठाये गये। परंतु पढ़ने में आपका चित्त नहीं लगा। माता के प्रेम से आप बछड़ों को लेकर जंगल में चराने जाते थे। आपने एक दिन रास्ते में देखा कि शोभाधाम श्रीरामचंद्रजी और श्री-लक्ष्मणजी आगे चले जा रहे हैं। यह देखकर आप वृक्ष की आड़ से बहुत देर तक शोभा देखते रहे। उनके अदृश्य होते ही आप विकल हो मूर्छित हो गए। मूर्छा दूर होने पर बन बन में व्या-कुल हो घूमने लगे। माता स्वयं जंगल में जाकर उन्हें ढूंढकर ले आईं। बहुत पूछने पर आपने जिस प्रकार सरकार मिले थे वह कह सुनाया। सुनकर वे उन्हें कंठ से लगा लिया।

जिस समय आप की अवस्था अट्ठारह वर्ष की हुई उस समय बड़ा भारी अकाल पड़ा। देवसिंह नाम का एक व्यक्ति ब्राह्मणों को ≈) देता था। माता के कहने से एक दिन आप भी उसके पास गए तो उसने आपको सबसे अलग ले जाकर १) दिया। आपने उससे पूछा कि आप सबको तो ≈) देते हैं मुझे १) क्यों दिया। उसने उत्तर दिया कि आपको श्रीरघुनाथजी ने १) दिलाया।

श्रीअयोध्याजी में सुकाल है। यह सुनकर आप माता और बहिन के साथ श्रीअयोध्या की ओर चले। रास्ते में श्रीसूर्यकुंड पर एक सूर्यवंशी क्षत्रिय रहते थे। उन्होंने आपको रोका। कुछ दिन वहाँ ठहर कर आप श्रीअयोध्याजी आए। श्रीसरयू स्नान कर इष्ट देव का दर्शन किया। और श्रीपीतांबर दासजी से भजन के लिये माला आदि प्राप्त की। श्रीअयोध्याजी के कल्पवास में ही माताजी का शरीर छूट गया। और साथ

में जो लोग आए थे। उनके साथ बहिन को भेज दिया। आपको विरक्ति उत्पन्न हुई। आप बद्रीनारायण के लिये चल दिए। श्रीबद्रीनारायणजी का दर्शन करके हरिद्वार आए और गंगाजी के किनारे किनारे चलते हुए बटौल पहुँचे। वहाँ से आगे बढ़ने पर मार्ग में आपको एक सिद्ध पुरुष मिले उन्होंने आपको एक मुट्ठी अन्न दिया। उस अन्न से आपने तीन मनुष्यों को खिलाया। आगे चलकर दूसरे सिद्ध मिले उन्होंने आपको कंद दिया। कंद खाने के बाद आपको छः मास तक भोजन की आवश्यकता नहीं पड़ी। तीसरे सिद्ध मिले वे हाथ की अँगुलियों को बजाते थे। और छंद-रचना करते थे। उन्हीं से आपने छंद-रचना की योग्यता प्राप्त की। चौथे सिद्ध से जिस समय भेंट हुई उस समय आपको सर्दी लग रही थी। आपने उनसे ओढ़ने के लिए गुदड़ी माँगी तो वे ओढ़ा कर चल दिए और आप भी चले। चलते चलते आप काँटेदार घने बन में मार्ग भूल गए। तब भगवान ने स्वयं शिकारी का वेष धरकर आपको मार्ग बतलाया। आपने उनसे पूछा कि आप कहाँ रहते हैं। उन्होंने कहा कि यहाँ से थोड़ी दूर पर हमारी गढ़ी है। उस गढ़ी को ढूढ़ते ढूढ़ते आपको आठ दिन लग गए। तब एक अंधे संत से भेंट हुई। संतजी ने कहा कि उन्हें तुमने पहिचाना नहीं। 'आपने नहीं' कहकर जब बैठकर ध्यान किया। तब ध्यान करते ही गो-लोक का प्रकाश हुआ और प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। उन्होंने देखा कि सोने की पृथ्वी पर अनेक दिव्य भवन बने हुए हैं। तड़ागों में अमृत सदृश जल भरा हुआ है। पक्षी मधुर बोली बोल रहे हैं। भौंरे

गुंजार कर रहे हैं। तालाब में कमल खिले हैं। वृक्षों में मीठे फल लगे हैं और सुंदर वस्त्राभूषण पहने हुए बाल-रूप से गौओं के पीछे जाते हुए श्रीभगवान दिखलाई पड़े। पूछने से कहा कि यही हमारा भवन है। यह कहकर मधुर दूध पिलाकर उन्होंने श्रीशंकरदासजीकी सब भूख और प्यास दूर कर दी। वे बालरूप दिव्य कम्बल देकर अदृश्य हो गए। उस कंबल को ओढ़ते ही दिव्य ज्ञान का प्रकाश हुआ। और बाल-सखाओं सहित बहुत से सूर्य के प्रकाश युक्त श्रीरामलालजी, श्रीभरतलालजी. श्रीलखनलालजी और श्रीशत्रुहनलालजी चारो भाइयों के दर्शन हुए। उन्होंने मन में यह अनुमान किया कि क्या प्रातःकाल हो गया ? ऐसा विचार आते ही जिस लोक का दर्शन हुआ था वह स्वप्नवत् क्षणभर में नष्ट हो गया। अतः उन्हें यह विश्वास हुआ कि यह दर्शन इस कंबल के ओढ़ने का ही प्रताप था। रास्ते में श्रीशंकरजी को श्रीदेवरामजी मिले उन्हें आपने कंबल ओढ़ा दिया तो उन्हें भी दिव्य ज्ञान का प्रकाश दिखलाई पड़ा। और उन्हें भी श्रीअयोध्याजी तथा श्रीरघुनाथजी का दर्शन होने से अपूर्व आनंद हुआ। श्रीशंकरजी चारो धाम की यात्रा कर उज्जैन आए वहाँ पर एक ब्रह्मचारी श्रीहनुमानजी के इष्ट के थे। उन्होंने आपको यह वरदान दिया कि आप की जिह्वा से आठो पहर श्रीरामनाम का उच्चारण होगा यह सुनकर आपको बड़ी प्रसन्नता हुई। श्रीशंकरजी को पूर्व दिशा में एक अवधूतिनी मिली वह आपसे अलग रहती हुई आठ वर्ष तक आपके साथ रही। उसने ब्रह्मचारी जी से अपनी विनय सुनाकर चरणामृत ग्रहण कर अपना शरीर छोड़ दिया।

वह श्रीशंकरजी से मिलने की दृढ़ इच्छा रखकर श्रीपार्वती नाम से श्रीरमण दूबे के यहाँ उत्पन्न हुई। श्रीशंकरजी भी सब तीर्थों में स्नान करके नीमसार होते हुए अपनी जन्मभूमि को लौट आए। वहाँ पर आपके संबंधी आपसे आकर मिले। और ये अपने घर गए आपके पास पं० रामदयाल नाम के एक सज्जन नित्य आते थे। उन्होंने अवसर पाकर आपसे कहा कि वेद यह कहते हैं कि धर्माचरण स्त्री के साथ ही करना चाहिए। श्रीशंकरजी ने उत्तर दिया। श्रीरघुनाथजी की बलवती इच्छा से ही ऐसा हुआ है।

जब भावना में बैठे तब सरकार से कहा कि अब शरीर छूटने के बाद सरकार अपने पास ही रखें। अब वियोग न हो तब मंद मुस्कराते हुए आपने कहा कि अभी दो बार तुम्हें शरीर धारण करना है। जिसमें से एक में विवाह होगा और वंश चलेगा। दूसरे में कुष्ठ व्याधि होगी। क्योंकि ये दो भोग शेष हैं। आपने कहा कि ये भी इसी शरीर से भोगवा दीजिए मैं भोगने को तैयार हूँ। पश्चात् प्रातःकाल जब आपने देखा तो आपके शरीर में चकत्ते हो गए थे। जख्म निकल आए, उसमें कीड़े पड़ गए, गंध होती थी। जब कीड़े अंग से बाहर निकलें तो उन्हें उठाकर आप उसी अंग में रख देते और कहते अन्यत्र तुम्हें कष्ट होगा। इस प्रकार गंगा में स्नान करके नाम जपते और भोग भोगते कुछ समय बीत गए। एक दिन संध्या समय स्नान कर नियमोपरांत शयन किया और प्रातःकाल उठकर देखते हैं कि सुंदर शरीर में हल्दी लगी हुई है। उधर श्रीरमण दूबे ने यह सोचा कि कन्या के लिये कोई योग्य वर ढूढ़ना चाहिए।

यह विचार कर ही रहे थे कि बाहर से आवाज़ आई कि श्री-शंकरजी के समान वर कहाँ मिलेगा। यह सुनकर वे श्रीशंकरजी के पास आए। और अपने हृदय की बात कहकर उनसे प्रार्थना की। श्रीशंकरजी ने भी अपने शरीर को देखा तो उसमें हल्दी लगी हुई थी। उन्होंने श्रीरघुनाथजी की इच्छा जान विवाह की स्वीकृति दे दी। शुभ मुहूर्त्त में विवाह हुआ। आपने उप-कुर्वाण* ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। आपके चार पुत्र हुए। श्रीरामकिंकरजी, श्रीप्रयागदत्तजी, श्रीगंगागोविन्दजी तथा श्रीजीवारामजी।

श्रीशंकरजी ने श्रीरामनाम-माला—नाम की एक पुस्तक लिखी। आपने कुँआ खोदवाया। उसमें जल की धारा नहीं निकली तब आपने श्रीरघुनाथजी का पद गाया जिससे उसमें जल हो गया। एक बार श्रीरामजी के व्याहोत्सव के निमित्त आटा नहीं था। आपने एक पद गाया उसके बाद श्रीगंगाजी एक सूप में मडुआ लेकर आईं। उसी के पदार्थ बनाकर भोग लगाया। अंतिम समय में आप विरक्त रहे। उस समय आपका नाम श्रीशंकरदासजी नाम से प्रसिद्ध हुआ था। आपकी विरक्ति गद्दीके अधिकारी आपके छोटे पुत्र श्रीजीवारामजी महाराज हुए।

श्रीजीवारामजी महाराज यज्ञोपवीत होने के उपरांत विद्याध्ययन करने लगे। व्याकरण एवं ज्योतिष का विशेष अध्ययन किया। संत श्रीमनसारामजी से अष्टांग योग

---

* ब्रह्मचर्य के दो भेदों में से एक। वह ब्रह्मचारी जो स्वाध्याय पूरा कर गुरुदक्षिणा देकर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे। अर्थात् यावज्जीवन ब्रह्मचारी न रहे।

और स्वरोदय की रीति को समझाया। किंतु श्रीमनसारामजी ने आपके और-आभास देखकर कहा कि और सब आशाओं को छोड़कर श्रीराम नाम भजना ही योगी के लिये परम सुखद है। उन्होंने आपको ध्यान-मंजरी पढ़ने के लिये दी। आपने शिरोधार्य करके कहा कि यह तो हमें श्रीसीतारामजी के सदृश ही हितकारी है। श्रीमनसारामजी ने कहा कि इसके पढ़ने से ही तुम्हें देश काल का ज्ञान हो जायगा और थोड़े समय ही में सब फलों की प्राप्ति होगी। आपको मंत्रराज का उपदेश श्री-गुरुदेव ( श्रीशंकरदासजी महाराज ) से ही प्राप्त हो चुका था। इससे सदाचार की रीति तथा संत-सेवा में आपका दृढ़ विश्वास था। आपने श्रीसीतारामजी के बहुत से पद बनाए हैं। आप श्रीअवध आए। पुरी की शोभा देख आपके नेत्रों में प्रेमाश्रु उमड़ आए। श्रीजानकी घाट गए। वहाँ बुद्धिमानों की सभा देखी। वहाँ से आपको अन्यत्र जाने की इच्छा नहीं हुई। वहीं पर ठहर गए। श्रीस्वामीरामचरणदासजी महाराज करुणासिंधुजी से आपने भक्ति के पंचम रस-रसराज शृङ्गार रस की प्राप्ति की। इस संबंध का आपका नाम श्रीयुगलप्रियाजी है। आपने उन्हीं से श्रीरामायण की टीका पढ़ी। अपने स्वरूप को पहिचाना। वहाँ पर बहुत दिन सत्संग में रहकर चिरान लौट आए। आपके बहुत से शिष्य हुए। जिनमें सर्वप्रधान श्रीस्वामीयुगलानन्दशरणजी लक्ष्मण किलाधिपति हुए।

आपके निर्मित ग्रंथों में भक्तमाल उत्तरार्द्ध, श्रीयुगलप्रिया-पदावली शृंगाररस रहस्य दीपिका एवं अष्टयाम वार्तिक मुख्य है।

यहाँ पर महात्माजी ने रसिक-शिरोमणिजी के नाम पर

एक पद निर्माण कर लोगों को सुनाया। यह पद युगल विहार पदावली में है। श्रीमहात्माजी यहाँ से चलकर दीघाघाट होते हुए पटना आए। यहाँ पर आपके मित्र महंत श्रीरघुवीरदासजी * रहते थे। श्रीमहात्माजी दो रात्रि आपके यहाँ ठहरे। महंतजी ने आपका बड़ा स्वागत किया। इसके पश्चात् श्रीमहात्माजी को प्रसिद्ध भक्त बाबू राजेंद्रप्रसाद रायसाहब अपने घर लिवा ले गए। यहाँ पर रायसाहब के परिवार ने श्रीमहात्माजी की आरती-पूजा की और बड़ा सत्कार हुआ। दूसरे दिन श्रीमहात्माजी अपने एक शिष्य श्रीरामशरण के यहाँ गए। वहाँ से आपका प्रोग्राम श्रीगयाजी के लिये बना। क्योंकि उस समय काशी के श्रीसियामोहनीशरणजी के पुत्र श्रीकिशोरीरमण प्रसाद सपरिवार गया की कोठी गायत्रीघाट में ही थे। इनसे मिलना आवश्यक था। दूसरा कारण यह था कि श्रीसियामोहनीशरणजी ने अपनी तीन लाख की जमींदारी में से चुनकर हदसा† नामक मौजा श्रीसद्गुरु-सदन को चढ़ाया था मौजा चढ़ाते समय उनकी भी यह इच्छा हुई थी कि महात्माजी अपनी चरण-धूलि से इस श्रीठाकुरजी के मौजे को पवित्र करते। अतः श्रीमहात्माजी ने इस अवसर पर गयाजी चलना उपयुक्त समझा।

---

* जैसा इनका नाम था वैसा ही गुण था। महंतजी बड़े विद्वान् थे। दरभंगा महाराज के एक पुजारी ने शृङ्गार-रस की निंदा लिखकर छपवाई थी। उसका उत्तर महंतजी और परमहंस वैदेहीशरणजी मिथिलावासी ने शास्त्र सम्मत दिया और मुकदमा चलाकर उसपर विजय भी प्राप्त किया था।

† यह मौजा गया के थाना हसुवा पोस्ट स्योतर के अंतर्गत है। सन् १९१८ में गया श्राद्ध करने गया जब श्रीसियामोहनी शरणजी गये थे तब इसकी रजिस्ट्री हुई थी। मौजा नगदी है। इसकी वार्षिक आय ६५०० है।

जिस समय श्रीमहात्माजी गया स्टेशन पर पहुँचे। बाबू लक्ष्मी नारायण लाल (ये बच्चाजी के मामा तथा स्टेट के मैनेजर दोनों ही थे) एक सुंदर सजी हुई गाड़ी लेकर गया स्टेशन पर स्वागत करने के लिये इष्ट मित्रों सहित उपस्थित थे। रेलगाड़ी से उतरते ही आपको मालाएँ पहिनाई गईं। आरती हुई और आप गाड़ी में बिठाकर कोठी आये और श्रीनिवास-पाठशाला में ठहरे और सम्मानित हुए। श्रीकिशोरीरमणप्रसादजी आदि के सहित यहाँ से आप हदसा मौजा गए। वहाँ पर प्रजाओं ने बड़े प्रेम एवं जयध्वनि के साथ आपका स्वागत किया। और वहाँ दो एक दिन ठहरकर आप गया लौट आए। श्रीरामबहादुरशरण बराबर आपके साथ थे। क्योंकि श्रीमहात्माजी ने आपसे अयोध्या से लिवा चलने के समय कहा था कि जैसे आप लिवा चल रहे हैं वैसे ही श्रीअवध लौटने तक आपको हमारे साथ रहना होगा। इसके बाद आपका प्रोग्राम श्रीचित्रकूट के लिये बना। आपके श्रीचित्रकूट आने की सूचना युगल बिनोद कुंज में पहले ही पहुँच गई थी। आप नियत समय पर चित्रकूट के लिये चले और चित्रकूट के स्टेशन पर पहुँचे वहाँ श्रीरामनारायणशरण श्रीश्यामसुंदरशरण आदि बड़े धूम से स्वागत करके आपको श्रीजानकी कुंड पर लाए। आपने श्रीश्यामसुंदरशरण से कहा कि हम भाई-साहब के यहाँ ठहरेंगे। और सब कार्य तुम्हारे ही यहाँ से होगा। अतः अपने बड़े गुरुभाई पर्वताधीश श्रीसियारामशरणजी महाराज की गुफा में निवास किया। वे उस समय वहीं पर थे। श्रीचित्रकूट की महिमा तो स्वयं ही अपार है। उनमें भी वहाँ श्रीजानकी

कुंड की सोभा अपूर्व है। श्रीमहात्माजी ने इस कुंड में स्नान किया और श्रीयुगल सरकार के पद बड़े प्रेम से गाया। श्रीमहात्माजी के गाते समय मोर चारो ओर से कूककर नाचने लगे। साक्षात् रास का आनंद हुआ। उन्होंने दूसरे दिन श्रीकामतानाथ की परिक्रमा की। श्रीजानकी कुंडीय श्रीयुगलबिनोद-कुंज के परमहंस श्रीयुगलबिनोद बिहारीशरणजी के उपस्थित नहीं रहने पर भी उनके नाती चेला श्रीश्यामसुंदरशरणजी ने आपके स्वागत सत्कार में कोर कसर नहीं की। वहाँ के पंडा श्रीबसंतलाल की बही में बड़े महाराज (श्री यु० श०) का हस्ताक्षर देखकर आप बड़े प्रसन्न हुए और उन्हें भली-भाँति संतुष्ट किया। तीसरे दिन आप श्रीअयोध्याजी को चले। क्योंकि श्रीगुरुदेवजी की तिथि माघ कृष्ण अमावस्या निकट थी। रास्ते में आप श्रीप्रयागराज में रुके। यहाँ पर आपके गुरु भाई श्रीराजेश्वरीशरणजी पोस्ट आफिस में क्लर्क थे आप उन्हीं के यहाँ ठहरे। श्रीत्रिवेणी में स्नान करके अक्षयवटादि प्रधान तीर्थों के दर्शन कर आप श्रीअवध को चले। स्टेशन पर चार बजे गाड़ी पहुँची श्रीबालकदासजी और महात्माओं के साथ स्वागतार्थ उपस्थित थे। महात्माजी स्थान पर आकर अपने मित्र श्रीधर्मदासजी से मिलने के अनंतर श्रीसरयूजी का दर्शन और आचमन करके श्रीगुरुदेवजी के पास गए। साष्टांग दण्डवत कर फल-फूल से उनकी पूजा की। तदनंतर नित्यकर्म से निवृत्त होकर गुरुदेवजी की सेवा में लग गए।

श्रीमहात्माजी को उत्तरोत्तर आनंद मिलने लगा। आपकी महिमा सुनकर बहुत दूर दूर से लोग आपके दर्शन और सत्संग

के लिये आने लगे। श्रीमहात्माजी ने जब से श्रीगुरुदेवजी से कमंडल धारण किया तब से वे अच्छे अच्छे पीतल चाँदी आदि के पात्रों के रहते हुए भी उन्हें अपने उपयोग में नहीं लाते थे। उन्हें श्रीगुरुदेवजी की सेवा में रख दिया था। आप केवल कमंडल से ही निर्वाह करते थे। एक दिन आपका कमंडल फूट गया। आपकी इच्छा हुई कि दूसरा कमंडल होता तो अच्छा था। आपकी यह इच्छा एक संत श्रीरामलग्नशरणजी* को मालूम हुई। उनकी यह इच्छा हुई कि हम अपना कमंडल श्रीमहात्माजी को भेंट कर दें। परंतु इच्छा यह हुई कि मधुकरी का समय हो गया है। माँग लावें तब चलें। इतने में बाहर से आवाज़ आई कि 'नहीं अभी पहुँचा आओ'। बाहर आकर देखा तो कोई दिखलाई नहीं दिया। यह लीला आपको विचित्र मालूम हुई। और आप तुरत दौड़े हुए श्रीमहात्माजी के पास गए। उस समय श्रीमहात्माजी श्रीसरयूजी की पूजा करके घाट पर पत्थर के चौतरे पर विराज रहे थे। श्रीरामलग्नशरणजी ने कमंडल उनके आगे रखकर उन्हें साष्टांग दंडवत किया। श्रीमहात्माजी ने जयश्रीजानकीवल्लभ लालजू कहकर कमंडल उठाकर सिर में लगाया और श्रीगुरुदेवजी धन्यवाद दिया।

महात्माजी में इतनी अधिक सरलता थी कि इनकी सरलता

---

* ये संत श्रीमहात्माजी के नाती चेला हैं। और अपना निर्वाह मधुकरी वृत्ति से करते हैं। श्रीकनक-भवन का चरणोदक एवं प्रसाद श्रीमहात्माजी को नित्य लाकर देते थे और अब भी देते हैं, तथा महात्माजी की चरण-सेवा कर तब वे अपने आसन पर जाते थे। उस समय वे श्रीजानकी घाट पर वदनपुर के मंदिर में रहते थे।

देखकर श्रीअयोध्याजी के बन्दर और कछुए भी आपसे मिले रहते थे और महात्माजी इन्हें अपने हाथ से खिलाते थे। वे कहते थे कि पहले नकली बनना है उसके बाद असली। बिना नकली के असली नहीं बनता। इस संबंध में आप एक दृष्टांत कहते थे। वह यह है। किसी राजा के दरबार में एक बहुरूपिया रहता था। वह अनेक प्रकार के रूप बनाता था। एक दिन राजा ने उससे कहा कि ऐसा रूप बनाओ जिसे एकदम पहिचाना ही न जा सके। यह सुन बहुरूपिया ने कहा कि मुझे एक वर्ष का समय मिले तो हो सकता है। राजा ने कहा कि बहुत अच्छा और एक लाख रुपया खजाने से दिलवा दिया जाय। राजा ने रुपये दिलवा दिए। बहुरूपिया अपने घर पर आकर एक वर्ष तक घर से बाहर नहीं निकला। इस बीच में दाढ़ी और मूछें खूब बढ़ गईं। तब बहुरूपिया शहर से बाहर आया और उसने साधु वेष बनाकर धूनी रमाई। और रात के समय अपने चारो तरफ़ थोड़ी थोड़ी दूरी पर यत्र तत्र कहीं पाँच सौ कहीं हज़ार रुपए जमीन में गाड़ दिए इस प्रकार पाँच सात स्थानों पर उसने रुपये गाड़ दिये। कुछ लोग उसके पास आने लगे। उनमें से कोई कोई साधु से अपना दुखड़ा भी रोते। कोई कहता मुझे अपनी लड़की की शादी करनी है। कोई कहता हमारे ऊपर डिगरी हुई है। कर्ज चुकाना है। वे साधु उनसे कहते कि अमुक स्थान पर ५००) गड़ा है खोदकर निकाल लो। किसी से कहते अमुक स्थान पर १०००) हजार गड़ा है खोदकर निकाल लो। ऐसा करने से साधु की प्रसिद्धि बहुत बढ़ी और बहुत से बढ़े बड़े लोग उनसे

मिलने के लिये आने लगे। यह बात राजा को भी मालूम हुई। एक दिन उसने अपने मंत्री से साधु के संबंध में पूछा। मंत्री ने कहा—हाँ हमने भी सुना है। वह साधु बड़े सिद्ध महात्मा हैं। राजा स्वयं उनसे मिलने के लिये गया। वह बहुत देर तक बैठा रहा। परंतु साधु उनसे बोले नहीं। यह देखकर राजा ने समझा कि ये सचमुच बहुत बड़े महात्मा हैं। अब राजा नित्य नियमित रूप से साधु महाराज के दर्शन के लिये जाने लगा। साधु कभी कभी राजा से कुछ बातें भी कर लेते थे। एक दिन राजा ने उनसे प्रार्थना की कि महाराज बड़ी कृपा हो यदि आप मेरी राजधानी को अपने चरणारविंदों से पवित्र करें। साधु ने कहा बहुत अच्छा। साधु के स्वागत के लिये उनके स्थान से राजा के महल तक खूब सजावट हुई। राजा स्वयं अपनी निजी गाड़ी पर साधु को बैठाकर राजमहल में ले गया और बड़े आदर के साथ सोने के सिंहासन पर बैठाया। रानी स्वयं झारी में जल लेकर देने लगीं और राजा स्वयं चरण धोने लगे। चरण धोने के पश्चात् जब राजा चरणोदक लेने लगा तब बहुरूपिया ने सिंहासन से उतर कर राजा को नमस्कार किया और कहा कि जिसके नकली स्वरूप का यह महात्म्य है उसके असली स्वरूप में तो न मालूम कितना महात्म्य होगा। यह कहकर वह वन में तपस्या करने के लिये चल दिया महात्माजी बोले कि भाई सुनो इसीलिए साधु मात्र में विश्वास और श्रद्धा रखनी चाहिए।

श्रीमहात्माजी का यह स्वभाव था कि श्रीगुरुदेवजी जिसे मानते थे वे उसे बहुत अधिक मानते थे। पंडित नंदगोपालजी

नाम के एक महात्मा संस्कृत के बड़े पंडित तथा कवि थे। वे चित्रपट रूप श्रीगुरुदेवजी का दर्शन करने के लिए नित्य अवश्य आते थे। और श्रीमहात्माजी के कहने से नित्य प्रसाद पाते थे एक दिन किसी कारण अप्रसन्न होकर आप बिना प्रसाद पाए चले गए। जब श्रीमहात्माजी को श्रीगुरु पूजा से अवकाश मिला तो उन्हें मालूम हुआ कि श्री पं० नंदगोपाल जी आज बिना प्रसाद पाए चले गए। यह सुनकर वे तुरत दौड़े हुए उनके स्थान पर प्रमोद-वन गए। और प्रार्थना करके लिवा लाए। उन्हें पहले प्रसाद पवाकर तब आपने प्रसाद पाया। श्रीमहात्माजी का स्वभाव अत्यंत विनम्र था।

श्रीलक्ष्मण घाट के पुजारी श्रीरामशरणदासजी तथा वहाँ के महंत रामकुमारदासजी से महात्माजी का बहुत प्रेम था। जब पुजारीजी का अंतिम समय आया तो श्रीमहंत रामकुमार-दासजी से श्रीपापमोचन भगवान सहित मंदिर और एक बाग श्रीमहात्माजी को अर्पण करा दिया। महात्माजी की ओर से श्रीपापमोचन भगवान की ऐसी पूजा और सेवा होती है जैसी बड़े बड़े मंदिरों में नहीं होती। इस बाग में श्रीमहात्माजी ने अनेक प्रकार के फल-फूल लगवाए और उसका नाम श्री-जानकी बाग रखा। श्रीसियामोहिनीशरणजी ने अपनी ओर से बाग में कूप बनवाया जिसका जल बड़ा मीठा है। श्रीजानकी बाग में भाद्र बदी पंचमी को दो जोड़ लीला स्वरूपों का झूला होता है। उस झूला का आनंद दर्शनीय होता है। श्रीमहात्माजी बिना श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा प्राप्त किए कोई कार्य नहीं करते थे। यहाँ तक कि यदि आपको श्रीजानकी बाग

श्रीयुगल सरकार सीतारामजी

जाना होता तो भी श्रीगुरुदेवजी की आज्ञा लेकर ही जाते। वहाँ जाते समय एक गुटकाजी साथ में रहती थीं उसमें श्री-युगलसरकार, श्रीगुरुदेव महाराज एवं श्रीरामपंचायतन के चित्र, और एक श्रीगुरुदेव महाराज का लिखा नोटबुक एवं दो स्तोत्रों का नोट बुक रहते थे। और चित्रपटों को सुंदर सिंहासन सजाकर पधराते थे। श्रीगुरुजी को फलादिक भोग लगाते और जो कोई वहाँ उपस्थित होता उसे प्रसाद देकर तत्पश्चात् स्वयं प्रसाद पाते थे।

महात्माजी कहते थे कि पृथ्वी का गुण स्थान विशेष में पृथक् पृथक् होता है। इस संबंध में वे पद्म-पुराण का एक उदाहरण देते थे। जिस समय श्रीरामचंद्रजी वन-यात्रा के लिये चले। उस समय जब वे पुष्कर तीर्थ के निकट पहुँचे तो उन्होंने अपने छोटे भाई से कहा—हे लक्ष्मण ! इसके आगे एक ऐसी जमीन है कि उस जमीन पर पैर रखते ही तुम हमसे यह कहेंगे कि पिताजी ने आपको वनवास दिया था मुझे नहीं। मैं क्यों वन-वन भटकूँ। आप वन को जाइए। मैं घर जाता हूँ। यह सुनकर श्रीलक्ष्मणजी बोले कि मैं ऐसा नहीं कह सकता श्रीरामचंद्रजी ने कहा कि तुम न कहोगे परंतु उस जमीन का ही ऐसा प्रभाव है कि उसके प्रभाव से तुम्हारी बुद्धि उल्टी हो जायगी यह बात हो ही रही थी कि उस जमीन पर पहुँच गए पहुँचते ही श्रीलखनलालजी बोले कि हे भाई साहब, अपना जो कुछ सामान है उसे लीजिए। हम वन को न जायँगे। श्रीरामचंद्रजी ने कहा कि अच्छी बात है न जाना, परंतु आज के मुकाम पर पहुँचा दो उसके

बाद चले जाना । श्रीलक्ष्मणजी ने कहा कि हम कुछ भी न सुनेंगे । यहाँ से हम लौट जायँगे । तब श्रीरामचन्द्रजी ने कहा कि अच्छा यहाँ आओ सामान देकर लौट जाना । लक्ष्मणजी ज्योंही श्रीरामचंद्रजी के पास पहुँचे वह स्थान पीछे पड़ गया । लक्ष्मणजी की बुद्धि पूर्ववत् हो गई । वे बोले अब हम शरीर न रक्खेंगे हमने ऐसी कठोर बात कह दी । श्रीरामचंद्रजी बोले कि तुमने नहीं कहा यह तो उस पृथ्वी का गुण था । मैंने तो पहले ही तुम्हें वहाँ जाने से मना किया था । श्री-लक्ष्मणजी ने अपना अपराध क्षमा कराया । इसीसे लोग ज्योतिष शास्त्र से जमीन शधवाकर तब मंदिर, मकान आदि बनवाते हैं । अतः यही श्रीजानकी बाग है जहाँ कि लोग पहले आने में हिचकते थे । और अब श्रीमहाराजजी की कृपा से आनंद होता है ।

श्रीमहात्माजी जब श्रीसीतारामजी के सम्मुख अनुरागावेश में पद गाते थे तो गाने के पूर्व यह अवश्य कहते थे — तर्क-दुनिया, तर्क ओकवा, तर्क मौला तर्क तर्क, अर्थात् संसार को छोड़ दे, स्वर्ग को छोड़ दे और परमात्मा को भी छोड़ दे । इन तीनों के त्यागने से जो अभिमान उत्पन्न होता है उसे भी छोड़ दे तब परमात्मा को प्राप्त होता है ।

आप कहते थे कि किसी एक सज्जन ने श्रीमहाराजजी के पास पत्र लिखा कि विना स्नान किए अर्थात् अपवित्र अवस्था में श्रीसीताराम नाम लिया जा सकता है कि नहीं ? इसके उत्तर में श्रीमहाराजजी ने लिखा कि जब लोग मुर्दे को कंधे पर लेकर श्मशान जाते हैं उस समय "श्रीरामनाम

सत्य है" का उच्चारण बड़ी ज़ोर से करते हैं। उससे अधिक अपवित्र अवस्था क्या हो सकती है। श्रीरामनाम सभी अवस्था में लिया जा सकता है। श्रीरामनाम पतित पावन है इसके उच्चारण से पतितों का उद्धार होता है।

गंगौल की रानी साहिबा जब चारो धाम की यात्रा करके लौटी तब उन्होंने एक यज्ञ किया। जिसके प्रबंधक मनिकापुर के महाराज थे। महाराज ने श्रीअयोध्याजी में आकर स्वयं बड़े बड़े स्थानों के सभी महंतों तथा महात्माओं से यज्ञ में सम्मिलित होने की प्रार्थना की। सभी ने अंगीकार कर लिया। परंतु महात्माजी ने श्रीअवध के बाहर जाना स्वीकार नहीं किया। उन्होंने अपने स्थान से अपना प्रतिनिधि भेजना स्वीकार किया। तात्पर्य यह कि ज्ञान वैराग्य की बातें तो सभी करते हैं। परंतु उनको व्यवहारिक रूप देने-वाले कोई विरले ही महात्मा होते हैं। हमारे महात्माजी कोरे वग़ीर न थे। जो कुछ कहते थे उसे कार्य रूप में परिणत करते थे एक बार छत्रपुर के महाराज श्रीविश्वनाथसिंह ( ये श्रीमहात्माजी के गुरुभाई थे ) ने लिखा कि आप छत्रपुर अवश्य आइए और दर्शन दीजिए किले पर जो दो सौ रुपया वार्षिक जाता है वह आप ही के यहाँ जाया करेगा। आपने इसके उत्तर में लिखा कि मैं श्रीमहाराजजी की सेवा छोड़ अवध से हटना नहीं चाहता। आपने बड़ी कृपा की जो ऐसा पत्र लिखा। पर जो श्रीमहाराजजी की सेवा के लिये किले पर जाता है वह वहीं पर जाना उचित है। अतः आप वहीं पर भेजा करें।

श्रीमहात्माजी को श्रीसीतारामजी की लीला के प्रति अत्यंत

अनुराग था। लीला देखने में वे अपने शरीर की सुधि भूल जाते थे। श्री शरद् पूनो के दिन श्रीसद्गुरु-सदन के सामने घाट पर तैयारी होती थी। स्वरूपों का शृंगार होता पधराए जाते थे और श्रीमहात्माजी रास के पद गाते थे। उस समय गाने में वे ऐसे तल्लीन हो जाते थे कि देखनेवालों को प्रत्यक्ष रास का आनंद मिलता था। उत्सव के समय आपको निद्रा आती ही न थी। आप कहते थे कि यदि उत्सव के समय यह जान पड़े कि समय बहुत हो गया हो तो वह उत्सव किस काम का?

आपके गुरुदेवजी जिस मनुष्य के प्रति जैसा प्रेम रखते थे, आप भी उसके प्रति वैसा ही भाव रखते। एक संत श्रीबाबा विचारनाथजी थे। ये तहसीलदारी छोड़कर साधु हो गए थे। आप फारसी और अरबी के प्रकांड पंडित थे। जिस समय आप मसनवी की व्याख्या करने लगते थे उस समय फैजाबाद तथा अयोध्या के बड़े-बड़े विद्वान् एवं वकील आपकी व्याख्या सुनकर दंग रह जाते। ये संत पंजाब के रहनेवाले थे। महात्माजी ने बड़ा हठ करके पंजाब से आपको अपने स्थान पर बुलाया और आदर से रखा फैजाबाद से बहुत से लोग सत्संग के लिये आते रहते थे। श्रीबाबा विचारनाथजी यथा नाम तथा गुण थे। जब आपका शरीर छूटा तो महात्माजी ने बड़े धूमधाम से आपको श्रीरामघाट पहुँचाया और बड़े समारोह के साथ भंडार किया। ये नाथ घराने निर्मल सन्त थे।

श्रीगुरुदेव की सेवा से अवकाश पाकर श्रीमहात्माजी एक बार तंजेब की चौबंदी ( बिलकुल बदन में चुभती हुई नई बन कर आई थी ) पहिन कर श्रीकनक भवन की ओर श्रीकामद

कुंज के मार्ग से चले जाते थे। आप बहुत तेज चलते थे। चाँदनी रात थी। श्रीमिथिला-कुंज के निकट पहुँचना ही चाहते थे कि एक तेज इक्का आ रहा था और उसपर एक मुसलमान स्त्री बैठी थी। उसने जो पान की पीक फेंकी तो वह पीक आपकी चौबंदी की दाहिनी ओर ऊपर से नीचे तक पड़ गई। आप रुक गए। और इक्का भी रुका। उस स्त्री ने उतर कर ग्लानि के साथ बड़ी प्रार्थना की। आपने मंद मुसकानि के साथ कहा कोई चिंता नहीं। धोखे से जल्दी में ऐसा हो जाता है। मुझे इसका दुख नहीं है। जाओ अपना कार्य करो। वह उधर गई और आप लौटकर श्रीसरयूजी में स्नान कर वस्त्र आदि बदल श्री-कनक भवन में गए और वहाँ दो पद गाया।

एक बार श्रीमहात्मी ने कहा कि दुनियादारी में फँसे हुए भगवद् विमुख लोगों का जो शरीर छूटता है तो उन्हें मर गए यह कहा जायगा, पर जो श्रीसद्गुरु का कृपापात्र हो चुका है उसके लिये तो महात्माओं का ऐसा कथन है—"जा मरिवे तें जग डरै, ताको डरै बलाय। सच्चे गुरु का चेला, मरै न मारा जाय।" और हमारे श्रीबड़े महाराजजी कहते हैं—

"जिसका दिल दिलदार से मिला इश्क के संग।
वे कबही मरते नहीं, यह तहकीक कुरंग।
यह तहकीक सुरंग लोक दोनों में जाहिरे।
जानो रहस अथाह चाह चौगुनी अबाहिर।
परम पुरुष से भेद नहीं अंतक* है तिसका।
युगलानन्द सुजान जिया है रसबस जिसका।

* काल।

इन बातों का विचार भगवद्दशरणा गतों को रखना चाहिए।

श्रीअवध धाम वास की महत्ता में आप कहते थे कि एक मनुष्य निःसंक सोता था। जब जगा तो दूसरे ने कहा कि तुम बड़े मूर्ख हो जो निःशंक सो रहे हो। तुम्हारे शिर पर मृत्यु नाच रही है। यह कहा ही था कि उसको स्मरण हुआ कि यह तो अवध में सो रहा है। लिखा है कि "निःशंकः सेते वयसः शिरसे समागतौ मृतौ ।। निकटे जागर्ति जयति कोशलाजाननि" यह कह आपने एक इतिहास कहा—एक बार एक भाग्यवान आए। और वे सरयूजी के किनारे टहल रहे थे। उसी समय एक दूसरे सज्जन आए तो उन्होंने पूछा कि आप किधर आए उन्होंने कहा कि हम श्रीअवध-वास करने के लिये आए हैं। पूछा—निर्वाह के लिये क्या करेंगे ? उन्होंने उत्तर एिया—पड़े रहेंगे। निर्वाह के लिये क्या करेंगे। कोई उपाय नहीं है पर श्रीअवध छोड़कर न जायँगे। उन्होंने कहा—अच्छा हम आप के लिये पाव भर चावल देंगे। यह सुन वे नाचने लगे और कहा—तब तो बड़ा आनंद होता। और वे रहने लगे। कुछ दिन बाद वे श्रीसरयू-तट में देखते हैं कि एक और सज्जन घूम रहे हैं उनसे पूछा—भाई आप किसलिए आए हैं। नवागंतुक ने कहा कि संसार से तबीअत ऊब गई अब अंतिम समय श्रीअवध की रज में ही बितावेंगे। उन्होंने कहा निर्वाह के लिये तो कुछ करना ही होगा। नवागंतुक ने कहा—कोई उपाय करके जितने दिन तक शरीर चलेगा चलावेंगे। आप क्या करते हैं ? तब उन्होंने कहा—एक सज्जन पाव भर चावल देते हैं उससे हमारा कार्य चलता है। नवागंतुक

ने कहा कि चावल में से जो माड़ निकलता हैं उसे आप क्या करते हैं ? उन्होंने उत्तर दिया उसे फेंक देता हूँ। नवागंतुक ने कहा अच्छा आप उसे हमारे लिये रख दिया कीजिए। तब वे स्वीकार किया और नवांतुक ने एक हाँड़ी लेजाकर उनके यहाँ रख दी। उसी में आपके लिये माँड़ रख दिया जाता जिसे पीकर आप निर्वाह करते थे। कुछ दिन बाद श्रीसरयू-तट पर एक भाग्यशील सज्जन माँड़ पीकर रहनेवाले सज्जन को मिले। उन्होंने पूछा—आप कैसे आए। यह सुनकर नवागत सज्जन ने उत्तर दिया कि निरावलंबी होते हुए भी श्रीधाम महाराज में वास के लिये आए हैं आप कहाँ रहते हैं और कब से हैं ? यह सुन द्वितीय अवधवासी महानुभाव ने अपनी व्यवस्था कह सुनाई। यह सुन नवागत व्यक्ति ने कहा कि भाई एक उपाय से हमारा भी निर्वाह हो जायगा द्वितीय व्यक्ति ने कहा कि वह क्या ? उत्तर दिया कि चावल धोकर धोअन क्या किया जाता है। यह सुन दूसरे सज्जन ने कहा कि फेंक दिया जाता है। नवागत व्यक्ति ने कहा कि यदि वह चावल का धोअन मुझे मिल जाय तो हमारा भी निर्वाह हो जाय। क्योंकि उसमें अन्न का अंश रहता है। और कलियुग में अन्न में ही प्राण है। यह सुन दूसरे सज्जन ने कहा कि यह कौन सी कठिन बात है एक हंडी रख दी जायगी, और ऐसा ही किया गया। इस प्रकार एक पाव चावल में तीन महानुभावों ने श्रीअवध-वास किया।

आप कहा करते थे कि श्रीमहाराजजी प्रेमियों को श्रीअवधवास का उपदेश देते थे। और यह कहते थे कि श्रीअवध में जो एक

भी ईंट लगाता है उसे श्रीसाकेत में रहने के लिये सोने का महल मिलता है और शरीर छूटने पर आवागमन से रहित हो जाता है। श्रीरामायणजी में बानरों के प्रति श्रीमुख वचन है—

अति प्रिय मोहि यहाँ के बासी। मम धामदापुरी सुखरासी॥

इसे श्रवण कर छपरे के वकील बाबू दुर्गाप्रसाद रामवल्लभ सहाय मुख्तार, गोरखपुर के श्रीशर्वरीशजी और प्रेमदासजी आदि अखंड अवधवास कर श्रीसाकेत पधारे यहाँ तो—

मुख से न लैहैं नाम राम को तहूँ है नीको,
कान में तो रामधुनि आपही से आवेगी।
पुनि धुनि हिय में समाय जाय तेरे अघ,
रोम रोम हूँ से हेरि हेरि कै नसावैगी॥
प्रीतम पुनीत प्रेम नेम छेम हेम दुति,
अंग अंग उमगि सुरंग बरसावैगी।
चरन सरन रामवल्लभा अरनिसि,
औध के रहे ते सब भाँति बनि जावैगी॥

आप कहते थे कि जिस सज्जन के शरीर छूटने पर कुछ न निकले वही पूर्ण विरक्त है। पैसा जमा करने के लिए नहीं है—

चख डार माल धन को कौड़ी न रख कफन को।
जो देगा तेरे तन को वह देवेगा कफन को॥

मनुष्यों की इतनी प्रबल आशा है कि हम यह करेंगे वह करेंगे। आज यह करेंगे कल वह करेंगे परिणाम यह होता है कि—

कल जो तैयार थे कपड़े बदलने के लिये।
आज वह जिस्म चला आग में जलने के लिये॥

विभव प्राप्त होने पर जल भी स्वयं नहीं ले सकते। उसके लिये भी नौकरों की पुकार होती है। और कहते हैं हम उठ नहीं सकते। और यदि वे कहीं बीमार पड़े तब तो जान और भी संकट में आई और कहते हैं कि अब करवट भी नहीं बदली जाती उतना तो कठिन है। पर यह नहीं स्मरण रखते—

कल जो कहते थे कि बिस्तर से उठ सकते नहीं।
उठ गए दुनिया से उनमें आज ये ताकत आ गई॥

संवत् १६७७ में कुछ लोगों ने कुछ आपकी निंदा करके अपने मुख को पवित्र किया। आपने जो सुना तो आप परम प्रसन्न हुए। और उसके प्रतिकार स्वरूप चार कवित्त और चार दोहे छपवा कर जनता में बँटवा दिये—

निन्दक हमारे मीत नव नीतहू से मृदु,
रजक समान मम चित्त पट मल हर।
पुनि हैं वै दीपक सरिस ही प्रकास मान,
हमहिं सुखद माखैं राखैं तम निज तर॥
सन्मुख हमहिं पिलावैं बैन सुधा सम,
आप छाके रहैं नित अति अभिमान गर।
राम वल्लभा शरन, करन प्रमोद महा,
जानि धरों सीस उन्हैं चरन कमल पर॥१॥

निन्दक समान उपकारी मेरो और नाहिं,
देख्यो सब ठौर गौर करके सु नारी नर।
कोटिन उपायकै विक्षेप मल जाय नाहिं,
सो तौ वे कृपाल निज मुख धोवै साफ कर।

हे हे उर प्रेरक श्रीराम सुख-धाम प्रभु,
अतिहि दयाल दीजै है प्रसन्न यह वर ।
राम वल्लभा शरन, चरन समीप राखैं,
लाखैं अभिलाखैं साखैं चाखैं प्रीतिलता फर ॥२॥
हे हे प्यारे निन्दक हमारे हित कारे हम,
प्रति उपकारे न तिहारे सकैं कैस्यो कर ।
अपनी सुओर से करत आप कृपा मोपै,
सो तौ है विदित खूब सकल सु घर-घर ॥
देखि सुनि गुनि-गुन पुनि-पुनि चुनि-चुनि,
लुनि-लुनि सार वस्तु रहस सु रूप कर ।
रामवल्लभा शरन, बिनै करै डरै नाहिं,
दीजिए मिलाय गुरु स्वामी जानकी सु बर ॥३॥
श्री राम विहारी सुखकारी धनुशरधारी,
विपति हमारी ही विदारिये सुप्रेम भर ।
अवध मझारी मान सरि भरि प्रेम वारी,
पाप तापहारी गुरु सदन मदन हर ॥
पय-सून पन्नग बचन से बचन हेत,
कृपा गारुडीय सीय पीय ही प्रमोद दर ।
राम वल्लभा शरन, नेह कौंच दीजै अंग,
जासे नाहिं ब्यापै मीत निन्दक बचन सर ॥४॥
दोहा—चहुँ दिसि से रक्षक अहैं, मम गुरु सिय पीय ।
अहित न केहू करि सकै यह लखि प्रमुदित हीय ॥१॥
श्रीनिन्दक महिमा लिखी चतुष्पदी स्तुति छन्द ।
पढ़ि गुनि जन आनंद लहैं भजहिं सीय रघुनन्द ॥२॥

फाल्गुन शुक्र सुनौमि तिथि शुक्र जनित यह छन्द।
श्री सतगुरु सदनहि लिखी सज्जन करहिं पसन्द ॥३॥
संबत् सज्जन जानिहैं, द्वीप ७ बार ७ गृह ६ चन्द १।
अंकन की गति वाम लिखि, लखि मन होय अनन्द ॥४।

श्रीमहात्माजी सर्वगुण संपन्न थे। दयालुता, उदारता, सौहार्द, विद्वत्ता, चातुर्य आदि तो थे ही परंतु सरलता आप में इतनी थी कि बड़े से लेकर छोटा कोई भी आपको बुलाता तो आप वहाँ अवश्य जाते। एक बार फैजाबाद की एक गरीब बुढ़िया के यहाँ कुछ संतों का भंडारा था उसने आपसे भी अपने यहाँ आने के लिये प्रार्थना की। आपने कहा—'आवेंगे।' परंतु किस समय आवेंगे यह निश्चित नहीं है। उस दिन जल बरस रहा था। रात्रि का समय था इक्का न मिलने पर भी आप वहाँ गए और उस वृद्धा का उत्साह पूर्ण कर चले आए।

श्रीहनुमन्निवास के स्वामी श्रीगोमतीदासजी का नाम किले के श्रीपंडितजी महाराज ने श्रीमतीशरण रखा था। जब वे संत-निवास में थे और उन्होंने वहाँ से हटना चाहा तब यह समाचार श्रीपंडितजी महाराज को ज्ञात हुआ। और ये महाराजजी के दर्शन करने के लिये आए। श्रीमहाराजजी ने महंत श्रीरामउदार शरणजी से सम्मति कर श्रीचंड को दंडपाणि भगवान का मंदिर आपके नाम रजिस्ट्री कर दी। इसी मंदिर का नाम श्रीहनुमन्निवास पड़ा।

श्रीहनुमानजी के जन्मोत्सव का समय कार्तिक मास था बधाई होती थी। श्रीमतीशरणजी ने श्रीमहाराजजी से कहा कि इस

बार जन्मोत्सव की तिथिवाले व्रत में अंतर पड़ता है। क्योंकि एक में त्रयोदशी और चतुर्दशी है और दूसरी में चतुर्दशी अमावस्या है। कौन सा किया जाय। यह सुन श्रीमहाराजजी ने कहा कि यहाँ का राज्य सरकार ने श्रीहनुमंतलालजी को सौंपा है वे ही यहाँ के राजा हैं। अतः जिस दिन श्रीहनुमानजी के यहाँ जन्मोत्सव मनाया जाय। उसी दिन आप भी कीजिए। और भविष्य में भी इसी भाँति करना उचित है वही होता है। बधाई कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से प्रारंभ होती है। उसमें प्रायः अवधवासी संत आते हैं। हमारे श्रीमहात्माजी भी बुलाए जाते थे और बड़े प्रेम से जाते थे। जाने पर श्रीमहात्माजी और श्रीमतीशरणजी दोनों सामना होने पर जब मिलते थे तो वह दृश्य दर्शनीय होता था। प्रत्येक उत्सव में आप नवीन पद गाया करते थे। वहाँ ही श्रीहनुमंतलालजी की बधाई के जो पद आपने गाए हैं वे प्रायः श्रीयुगलविहार पदावली में प्रकाशित हो चुके हैं किंतु उनमें —

अंजनि छोना हो। तेरो जुग जुग जीवे माई।

गोद मोदमय मूरति सोहै करत प्रमोद विनोद सु दोहै।
निरखि निरखि सुरनर मुनि मोहै और कहै कवि को,
सियराम खिलौना हो।

ललित ललोना शुद्ध सुसोना त्रिभुवन में न भयो नहिं होना।
लाल भाल पर श्याम डिठोना युगलबिहारीनि हिय बिय भक्ति
सुबोना हो।

इस पद को संत लोग सभी बधाइयों * में गाते हैं।

* चैत शुक्ल प्रतिपदा से रामनवमी तक श्रीरामजी की, वैशाख शुक्ल

आपका अष्टयाम यह था कि प्रातःकाल चार बजे उठते और शारीरिक कृत्य करके स्नान आदि से निवृत्त हो मंदिर पधारते और श्रीमहाराजजी की श्रीचरण-पादुका, चित्रपट एवं श्रीमहाराजजी के ठाकुरजी (श्रीमहाराजजी के ठाकुरजी ये हैं श्रीबड़े महाराजजी का चित्रपट, पंचमुद्रा एवं चरणोदक की एक गोली जो सिंहासन में सामने ताखे पर विराजमान हैं।) सेवा कर ठंढई भोग लगा आसन पर आते। और ठंडई प्रसाद लेकर स्नान कर मंदिर आते। तथा नव बजे मंदिर की शृंगार आरती करते। पश्चात् फूल तुलसी बालभोग और एक चुक्के में दूध कोई साथ में लिये रहता या स्वयं लेकर श्रीसरयूजी आते उस समय आपके खड़ाऊँ की आवाज़ सुनते ही कछुए और मछलियाँ एकत्र हो जातीं। और श्रीसरयूजी के तट पर बैठ पूजन कर दूध और बाल भोग श्रीसरयूजी में छोड़ते। बंदर और चीलें भी आ जातीं। आप स्वयं इन सबको श्रीसरयूजी का प्रसाद पवाते थे। बंदर तो इतने हिले हुए थे कि वे आपका हाथ पकड़ लेते थे और आप उनके मुख में खिला देते थे। बाकी प्रसाद बाँट दिया जाता था। पश्चात् हाथ धोकर आचमन कर, तर्पण करते। और श्रीसरयू-अष्टक का पाठ कर मंदिर आते, बैठते और सत्संग होता। जब राजभोग का समय आता तो राजभोग आप स्वयं

---

प्रतिपदा से नवमी तक श्रीकिशोरीजी की। वैशाख शुक्ल चतुर्दशी से ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्थी तक श्रीचन्द्रकलांजी की एवं कार्तिक कृष्ण प्रतिपदा से चतुर्दशी तक हनुमानजी की, परन्तु श्रीसद्गुरु सदन में अगहन बदी प्रतिपदा से अगहन बदी अष्टमी तक बधाई होती है। श्रीचन्द्रकलाजी की बधाई केवल श्रीसद्गुरु सदन में होती है।

लगाते और उस समय कुछ पाठ किया करते। फिर श्रीमहाराजजी को शयन कराने के बाद पंगत में प्रसाद पाते। तत्पश्चात् आसन पर आते और विश्राम करते। फिर तीन बजे उठ स्नान कर मंदिर आते और वहाँ पर कथा-सत्संग गान आदि होते। ग्यारह बजे आरती होती। सरकार के शयन करने के बाद ब्यारू कर आप श्रीसरयूतट के फर्शवाले पत्थर पर बैठ जाते जो भाग्यवान उस समय उपस्थित रहते वे रहस्यमय सत्संगों का लाभ उठाते। सत्संग में कभी दो बजता, कभी ढाई, किसी दिन तीन भी बज जाते। पश्चात् शयन करते और चार बजे पुनः उठ जाते। यही आपका अष्टयाम था। आप कहा करते—

'जिन नैनों महबूब समाए उन नैनों में नींद कहाँ।'

श्रीमहात्माजी श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी महाराजकृत श्रीरामचरितमानस * का पाठ नित्य नियम से करते थे। और श्रीगुरुदेवजी के कथनानुसार कहते थे कि सभी युगों में भिन्न भिन्न व्यवस्था थी। जैसे-सत्ययुग में स्वर्ण का पात्र, वेद-द्वारा

---

* यह श्रीरामचरित मानस की प्रति काशी-निवासी गोस्वामीजी के ग्रंथों के मर्मज्ञ श्रीभगवतदासजी ने १७२१ की प्रति से १८२८ में उतारी हुई प्रति अनंत श्रीस्वामी युगलानन्यशरणजी महाराज श्रीलक्ष्मणकिला निवासी के कृपापात्र रामायणी श्रीरामरघुवीरशरणजी महाराज के लिये भेजी थी। उक्त रामायणीजी महाराज आजीवन रामायणजी की सेवा-पूजा के साथ साथ पठन-पाठन और उपदेश करते थे। जब आपके साकेत पधारने का समय आया तब आपने श्रीमहात्माजी से कहा कि बच्चा इन्हें अपने श्रीमहाराजजी के निकट पधराओ और वहीं सेवा-पूजा हो तथा तुम नित्य पाठ किया करो। वर्तमान समय में इससे प्राचीन दूसरी प्रति नहीं पाई जाती और इसका पाठ संत-समाज एवं गोस्वामीजी के काव्य-मर्मज्ञ सज्जनों में माननीय है। इसी प्रति के अनुसार अभी श्रीसीताराम प्रेस काशी ने प्रति प्रकाशित करवाई है।

ज्ञान अस्थिगत ( हड्डी ) प्राण, त्रेता में रजतपात्र, शास्त्र द्वारा ज्ञान, रुधिरगत प्राण; द्वापर में ताम्रपात्र, भक्ति द्वारा ज्ञान, त्वचागत प्राण एवं कलियुग में मिट्टी का पात्र, अन्नगत प्राण, पुराण इतिहासादि द्वारा ज्ञान होता है। परंतु उन सबका सार श्रीगोस्वामीजी के श्रीरामचरितमानस का प्रेमी जब तक न होगा तब तक श्रीकौशल राजकुमार श्रीरामरघुनंदनजी में प्रेम होना कठिन है। और रामायण शब्द का अर्थ इस प्रकार करते थे कि श्रीरामः अयने प्राप्नोति इति रामायणः अर्थात् श्रीरामजी की जिससे प्राप्ति हो उसे श्रीरामायण कहते हैं। पुनः श्रीरामस्य अयने गृहं स रामायणः अर्थात् जो श्रीरामायणजी का घर हो उसे रामायण कहते हैं। अतः घरवाले से भेंट तभी होती है जब कि उसके घर पर जाया जाता है। तीसरे अर्थ में कहते थे कि रामायण ही रामजी हैं। आदि।

एक बार आप संध्या समय बा० बलदेवप्रसादजी वकील के यहाँ आए। उस समय वकील-साहब अंदर घर में थे। बाहर मास्टर बच्चों को पढ़ा रहे थे। सबने उठकर आपकी अभ्यर्थना की। और कहा कि बाबूजी भीतर हैं। बुला लावें ? महात्माजी ने कहा कि तुम लोग पढ़ो। मैं बैठता हूँ। उस समय एक बालक 'आई गेव हिम माई केन' ( I gave him my cane ) मैंने अपना बेंत उसको दिया। पढ़ रहा था। आप बैठे सुनते रहे। कुछ देर बाद आपने मास्टर से पूछा—अपना बेंत किसको दिया ? मास्टर ने कहा—महाराज यह तो इसमें कुछ भी नहीं है। आपने कहा कि व्याकरण के नियम से उसको पुरुष को दिया अथवा स्त्री को दिया। कहा अन्य पुरुष,

और पुरुष के लिये ही व्यवहृत हुआ प्रतीत होता है। आपने कहा—एक काग़ज़ पर अँगरेजी में और हिंदी में इसका अर्थ लिख दीजिए। मास्टर ने लिख दिया वह काग़ज़ आपने ले लिया। जब वकील साहब आए और आपको दंडवत कर बैठे। तब आपने उनसे कहा कि 'आइ गेव हिम माई केन' का क्या अर्थ है। वकील साहब ने कहा कि यह तो छोटे-छोटे बच्चों के पढ़ने के वाक्य हैं। इसके अर्थ में तो कोई विशेषता नहीं है। सीधा अर्थ है 'मैंने अपनी बेंत उसको दी'। आपने कहा—उसको किसको, वह कौन है? वकील साहब ने कहा कि यह तो इसमें नहीं है कि किसको दिया। आपने कहा कि इसमें वकील और दो गवाह तथा एक निशान देहन्दह भी मौजूद हैं। वकील साहब आश्चर्य में पड़ गए कि दो गवाह और निशान देहन्दह इसमें कहाँ से आ गए? अतएव आप ही अर्थ बताइए। कहा कि उसको देखो। उसको पुरुष है या स्त्री। व्याकरण के नियम से क्या है। उन्होंने कहा—अन्य पुरुष है। पुरुष किसको कहते हैं? वकील साहब ने कहा पुरुष मर्द को कहते हैं। आपने कहा मर्द कौन है? वकील साहब ने कहा मर्द सभी मर्द हैं। आपने कहा नहीं, देखिए श्रीरामचरित-मानस में भगवान शंकरजी क्या कहते हैं—

पुरुष प्रसिद्ध प्रकासनिधि, प्रगट परावर-नाथ।
रघुकुल-मनि मम स्वामि सोइ, कहि सिव नायेउ नाथ ॥

अतः पुरुष श्रीरघुनाथजी हैं। देखिए जब जिह्वा रूपी वकील कहती है कि मैंने अपना बेंत उसको दिया तब दाएँ हाथ की उँगली निशान देहन्दह की तरह ऊपर की ओर उठ

कर ऊपर का इशारा बताती है और दोनों आँखों के कोर रूपी गवाह ऊपर की ओर चमककर अपना समर्थन करते हैं। आप अब देखें कि यह सब बातें मौजूद हैं कि नहीं। यह सुन सब बड़े प्रसन्न हुए और कहा कि न मालूम कितनी बार इसे पढ़ा और सुना गया। पर, सच्चा अर्थ आज ही सुना गया। इसके पश्चात् कुछ देर और सत्संग होने के अनंतर आप चले आए।

एक बार श्रीमहात्माजी के गुरुभ्राता श्रीभगवंतशरणजी बाहर गए थे। बहुत दिन बीत गए। पर वे नहीं आए। सावन आ गया। झूला हो रहा था। आपने एक पत्र उनको लिखा। उसमें लिखा--

पावन पावन हैं गुरुदेव सदा जनके मन भावन भावन।
भावन भावन को भजिए जग ग्रीषम ताप नसावन सावन॥
सावन सावन आवन आवन छावन छावन गावन गावन।
गावन गावन घूमो नहीं बसिए सरजू तट पावन पावन॥

आपका पत्र पाते ही वे आए और दोनों भाइयों ने श्रावण का आनंद लिया।

आप अपने ऐश्वर्य को माधुर्य में ऐसा छिपाते कि वह लख नहीं पड़ता था किंतु समय समय पर छलक जाता था। नौ बजे का समय था आप श्रीगुरुदेवजी की सेवा में थे। और श्रीसियालालशरणजी पंखा खींच रहे थे। एक खटिक आम बेचने आया। इस खटिक को सब कनवा कहा करते हैं। पर यह काना नहीं है। आवाज़ दी—महाराज आम लाए हैं। आपने कहा ठहरो। पश्चात् आपने मंदिर की आरती कर श्रीसरयू-पूजन किया और मंदिर में आए। इतने में उसने दुबारा

आवाज़ लगाई। आपने कहा कि मैं भूल गया और वहाँ पर पहुँचे। पूछा—कितने आम हैं? उसने कहा—डेढ़ सौ। आपने कहा डेढ़ सौ नहीं है तुम गिनो उसने गिने तो सौ आम ठहरे। वह घबड़ाया। और कहा कि मैं फैजाबाद से अभी डेढ़ सौ आम लेकर आ रहा हूँ। बीच में कहीं रखा भी नहीं और आम कम कैसे हो गए। आपने कहा फिर गिनो। फिर भी गिना तो वही सौ ठहरे। आपने कहा कि झूठ बोलता है। बता दाम? कितने का लाया है। झूठ न कहना। उसने दाम बतलाया। आपने उसके बताए दाम से आठ आने पैसे अधिक मुनाफे के लिये दे दिया और श्रीसियालाल शरणजी से कहा कि गिनकर टोकरी में रख लो। आमवाले के चले जाने के पश्चात् आपने श्रीसियालाल शरणजी से कहा ठीक से गिन लिया है उन्होंने कहाँ—हाँ सरकार। आपने कहा तुम गिनना नहीं जानते, फिर से ठीक-ठीक गिनो। गिना गया तो वह आम डेढ़ सौ हुआ। सब आश्चर्य में हो गए।

राय साहब बाबू रामगुलाम (श्रीरामजानकी शरण) फैजाबाद में जेलर थे। ये श्रीगुरु महाराज के अतिरिक्त दूसरे को नहीं मानते हैं। आप फरुखाबाद के अंतर्गत फतहगढ़ के रहनेवाले हैं। वहाँ इनकी माता बहुत सख्त बीमार हुईं। इनके पास तार आया। तब ये रात भर श्रीमहाराजजी की प्रार्थना करते-करते सो गए। सुबह ये अपने काम पर गए। और उधर श्रीमहात्माजी श्रीसद्गुरु भगवान की सेवा-पूजा एवं आरती कर जेल आए और आपको बुलवाया। इन्होंने आकर दंडवत किया। महात्माजी बैठे। कहा--क्योंजी; क्या किसी के माता-

पिता जन्म भर जीते रहते हैं ? जो तुम रात भर प्रार्थना करते रहे और मुझे सोने नहीं दिया। लो, अब तुम्हारी माता अच्छी हैं। अब ऐसा उतावलापन न करना। कुछ देर उपदेश कर आप चले आए। उसके तीसरे दिन आपके पास छोटे भाई का पत्र आया कि उस दिन रात में सबेरे चार बजे मालूम पड़ा कि सफेद दाढ़ीवाले बाबा आए और कुछ कहा। उसके बाद आँख खुल गई। उसी समय से माताजी बिल्कुल अच्छी हैं। मित्र कवि ने श्रीमहात्माजी के संबंध में ठीक ही कहा है--

मूरति निराली दिब्य सूरति निराली स्वच्छ-
कीरति निराली जग जाली भक्ति आली है।
बानी है निराली तान कबिता निराली भली,
गुरुपद प्रीति की निराली रीति चाली है॥
शिच्छा है निराली पुनि दीक्षा निराली करैं,
इच्छा है निराली सत्संग संत साली है।
कृपा है निराली पुनि प्रभुता निराली लसै,
सुखमा निराली 'मित्र' उपमा निराली है॥

दोहा--चरित निराले हैं सकल, भरित प्रमोद प्रताप।
श्रीरामबल्लभासरन के, जग जाहिर जस-दाप॥

सावन के महीने का झूला हो रहा था। एक संत नित्य नियम से आते थे। एक दिन वे नहीं आए। दूसरे दिन आपने एक महात्मा से पूछा कि वे क्यों नहीं आए। उन्होंने कहा उनके आँख में दर्द हो गई है इससे वे नहीं आए। आपने कहा श्रीमहाराजजी का चरणोदक ले जाकर लगा दीजिए ठीक हो जायगा। ऐसा ही किया गया और आँख तुरत ठीक हो गई।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने मानस में लिखा ही है--

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन। नयन अमिय दृग दोष बिभंजन॥

अतः श्रीसद्गुरुदेव और उनकी वस्तुओं में जैसा विश्वास होना वर्णित है वैसा ही विश्वास आपमें पाया गया।

श्रीकाशी के एक गौड़ ब्राह्मण के बालक अपने मन में यह मनोरथ कर शरणागत हुए कि श्रीगुरुजी महाराज हमें अपनी सेवा में रखें। उनका नाम महात्माजी ने श्रीसरयूशरण रखा। वे बड़े कोमल चित्त, सरल स्वभाव गाने एवं हारमोनियम बजाने के प्रेमी थे। श्रीसिया-सुहाग बाग में महात्माजी का विश्राम स्थान सजाना, और उनकी सेवा, श्रीलीला-स्वरूपों का शृङ्गार श्रीसद्गुरु भगवान के लिये भिन्न भिन्न प्रकार के शाक व्यंजनादि बनाना आपके प्रधान कार्य थे। आपकी सेवा से श्रीमहात्माजी तो प्रसन्न थे ही, अन्य सभी लोग प्रसन्न रहते थे। ये सेवक और प्रेमी तथा आगन्तुक सभी सज्जनों के सत्कार का ध्यान रखते थे। इन्होंने ही श्रीमिथिलादासजी* को श्रीमहात्माजी की सेवा में लगाया।

---

* श्रीमिथिलादासजी श्रीजनकपुर विहारकुंड के संत श्रीरामसनेहीदासजी के कृपापात्र हैं। वैराग्य के पूर्व गृहस्थी का पूर्ण उपभोग कर ये विरक्त हुए और अपने श्रीगुरु महाराज की सेवा करते थे। सं० १९८१ के आषाढ़ में श्रीअवध आए और श्रीसद्गुरु सदन में ठहरे। पहले स्थान के अन्य कार्य करते थे। श्रीमहात्माजी में तथा इनके गुरु महाराज में बड़ा प्रेम था। अतः महात्माजी भी इन पर बड़ा प्रेम रखते थे। भक्ति के पंच रसों में प्रधान रसराज शृंगार रस की उपासना का उपदेश आपने श्रीमहात्माजी से लिया। इससे श्रीमहात्माजी इन्हें मिथिलाशरण कहते थे। श्रीमहात्माजी की जैसी सेवा आपने की वह अकथनीय है अभी अभी विगत-वर्ष गुरु भाइयों और सेवकों से चंदा लेकर २२५०)

बारहबंकी में श्रीबद्रीदासजी के उद्योग से उनके प्रबंध में एक रामचरित-प्रकाशक-मंडली नामक संस्था है जो अगहन शुक्ल पक्ष में श्रीरामजन्म से लेकर श्रीरामकलेवा तक छः दिन लीला करती है। इसमें सब शिक्षित जन रहते हैं। वे प्रायः महात्माजी की शिष्य-मंडली के ही हैं। लखपती से लेकर एक गरीब तक इसमें पार्ट करता है। यह लीला बड़े आनंद की होती है। कई वर्षों से इनका विचार श्रीअवध में आकर श्रीमहात्माजी को लीला दिखाने का था। अतः ये लोग आए। सैकड़ों आदमियों की जमात थी। लीला हुई। बड़ी भीड़ होती थी। प्रसिद्ध प्रसिद्ध महात्मा इसमें आते थे लीला के पश्चात् एक भंडारा किया गया और बाराबंकी चले गए इस लीला में कुल खर्च इन्हीं लोगों ने किया था। लीला अपूर्व हुई।

फाल्गुन शुक्ल तृतीया १६८४ को श्रीसरयूशरणजी कुछ अनमने थे और इन दिनों वे इसराज का अभ्यास भी कर रहे थे इसलिए वे उस दिन भी लीला स्वरूपों के शृङ्गार-गृह में जाकर सो रहे। (उदर-शूल उन्हें हुआ करता था) जब महात्माजी ठंढई लेकर मंदिर में गए। तब श्रीमिथिलादासजी ने आवाजें दीं। परंतु उत्तर कुछ भी न मिला तब श्रीमिथिलादासजी ने महात्माजी से जाकर कहा कि श्रीसरयूशरणजी को आवाजें देते हैं किंतु उत्तर कुछ नहीं मिलता। श्रीमहात्माजी ने कहा शरीर तो नहीं छूट गया! किवाड़ हटाकर देखा जाय। जब किवाड़ में ज़ोर से

---

ह० व्ययकर श्रीसियासुहाग बाग का अपूर्व कुंज इन्होंने बनवाया है। ऐसा कुंज श्रीअवध में और दूसरा नहीं है तथा श्रीमहात्माजी का एकादशी का फलाहारी भंडारा इन्हीं की ओर से हुआ करता है।

धक्का दिया गया तो किवाड़ खुल गया। और देखा कि सरयू-शरणजी पैर पर पैर चढ़ाए दोनों हाथों से छाती दाबे ऐसे पड़े हैं। मानो सो रहे हैं। महात्माजी के पास खबर आई। वे श्रीसरयू-प्रवाह कराए गए। असमय में उनके शरीर छूटने का खेद श्रीमहाराजजी के चित्त में प्रायः हो जाया करता था।

अपने को भगवान ने कहा है कि "अहं भक्त पराधीनः।" अर्थात् हम भक्त के पराधीन हैं। अतः इसीसे भगवान श्रीविग्रह के रूप में साकार हो सेवकों को सेवा का सुख देते हैं। श्री-महात्माजी ने भी इसी को चरितार्थ किया। और सं० १९८५ के वसंतऋतु से अस्वस्थता का रूप धारण किया आपको ज्वर हुआ वह ज्वर कई दिनों तक जब नहीं उतरा और सब वैद्य चिकित्सा से लाचार हो गए तो श्रीलक्ष्मण घाट के वैद्य श्रीराम-दत्तजी बुलाए गए। उन्होंने एक काढ़ा तजबीज किया। उसी काढ़े को लेने से रेचन हुआ और मल निकला तथा बुखार छूटा। कमजोरी अधिक थी उसके लिये औषधियाँ हो रही थीं। मंदिर की सेवा-पूजा का भार गान-तान में दक्ष व्यवहार-कुशल संत प्रकृति श्रीमहावीरशरणजी ने ग्रहण किया और अब तक वे ही मंदिर के प्रधान पुजारी हैं।

भिनौनी जिला बहराइच के पंडित श्रीरामदेवशरण ( देवी-दीन ) आपके गुरुभाई हैं। उनपर कुछ मालगुज़ारी के रुपए चढ़ गए थे। उन्होंने आकर श्रीमहात्माजी से कहा। महात्माजी के पास उस समय रुपए न थे। अतः श्रीहनुमानगढ़ी के एक संत से हैंडनोट लिखकर १०००) उनको दिया। उन्होंने अपना कार्य किया कुछ वर्ष के पश्चात् जब उन संत का शरीर छूट गया और उनके

श्री सीताराम शरणजी
( बाबू राधारमण लाल अग्रवाल )

चेला उनकी चीज़ों के अधिकारी हुए। तब श्रीमहात्माजी के पास बार-बार तगादे आने लगे। एक दिन वे आए और श्रीमहात्मा से बड़ा तगादा किया और कहा कि हम रुपया धरा लेंगे। यह कहकर चले गए। श्रीमहात्माजी के चित्त में विशेष खेद हुआ। रात्रि में आरती के बाद मंदिर से विश्राम स्थान पर आए। दूध का चुका श्रीमिथिलादास आपके पास ले गए। आपने मुख में ठेकाकर उन्हें दे दिया। यह देख श्रीमिथिला-दासजी ने कहा कि सरकार ने दूध मुख में ठेकाकर दे दिया? आज कैसी तबीयत है? आपने कहा—तबीयत अच्छी है पर चित्त ही तो है और आप शयन कर गए।

भक्तों का दुख भगवान देख नहीं सकते। उनके लिये आपने कौन-कौन-सी लीलाएँ नहीं कीं। वे हमारे सद्ग्रंथों में लिखी हैं। श्रीमहात्माजी के चित्त का खेद आप कैसे देख सकते जिन्हें सद्गुरु रूप आपही की आशा है। सद्गुरु भगवान का आसन हिला और महात्माजी के शिष्य बरेली-निवासी बाबू राधारमणजी अग्रवाल ( श्रीसीतामरणशरण ) मैनेजर रियासत सूर्यपुर हथौंधा जिला बाराबंकी ग्यारह बजेवाली देहरादून एक्सप्रेस से श्रीअवध आए और श्रीमहात्माजी के पास बारह बजे पहुँचे, साष्टांग दंडवत करने के पश्चात् चरण-स्पर्श करने के समय दो सादे लिफाफे दोनों चरणों के नीचे खिसका दिए। महात्माजी ने लिफाफे उठा लिए और पूछा बच्चा, अच्छे हो। उन्होंने उत्तर दिया—हाँ सब सरकारी कृपा है। आपने पूछा-बच्चे अच्छे हैं उन्होंने कहा—हाँ अच्छे क्यों न होंगे जिनपर सरकारी कृपा ही है। आपने कहा-मिथिलादास!

सुनते ही श्रीमिथिलादासजी आए और कहा—आया सरकार। आपने मिथिलादास की ओर देखते हुए कहा कि बच्चा को जल खिलाओ और पाने के लिये आसन पर भेजवाओ। अब आपने जो लिफाफों को खोला तो उनमें सौ-सौ रुपए के नव-नव नोट थे। देख आपने कहा--बच्चा यह बड़े मौके से आया। मैनेजर साहब ने कहा--क्यों सरकार? आपने साधु-वाली घटना कह सुनाई। मैनेजर साहब ने कहा कि अभी उनके पास भेजा जाय, दो चार सौ जो कुछ और लगे देकर काग़ज़ मँगवा लिया जाय। श्रीभगवंतशरणजी महाराज बुलाए गए। वे और श्रीश्यामाश्यामजी (ये श्रीमैंनेजर साहब के पास रहते हैं) गढ़ी पर गए। और हिसाब किया तो सोलह सौ रुपए हुए। उसे देकर हैंडनोट लेकर चले आए। जब संध्या समय मैंनेजर साहब श्रीमहात्माजी के निकट आए तब आपने कहा बच्चा! उसी में दो सौ रुपए बच गए। बलिहारी आपकी सरलता की। मैनेजर-साहब बड़े उदार हृदय के हैं। श्रीसियामोहिनीशरणजी के बाद उदार शिष्यों में यही मुख्य हैं।

श्रीमहात्माजी से हिन्दुस्तानी तो प्रेम करते ही थे। परन्तु आपके प्रेमी अँगरेज लोग भी थे। आर० सी० होबर्ट (इस समय आप गोरखपुर में कमिश्नर हैं) साहब डिप्टी कमिश्नर आपके बड़े प्रेमी थे। जब आप विलायत जाते थे तब भी वहाँ से आपके पास बराबर पत्र लिखते थे। जब कोई अँगरेज फैजाबाद आने लगता तो उससे आप कहते थे कि गोलाघाट पर श्रीसद्गुरु-सदन में श्रीरामवल्लभाशरण नाम के साधु हमारे विद्वान्

मित्र हैं। उनसे आप अवश्य मिलिएगा। इससे होबर्ट साहब के बहुत से मित्र श्रीमहात्माजी से मिलने के लिए आते थे। आपकी मेम साहिबा भी महात्माजी में बड़ी श्रद्धा रखती थीं।

संवत् १९८५ के कार्तिक मास में श्रीरामविधुशरण ( विधु कवि ) को गयाजी से श्रीअवधवास के लिए श्रीमहात्माजी ने बुलाया। आप आकर श्रीअवध में रहने लगे। इन्हें श्रीमहात्माजी अपने पास ही रखते थे और उनसे पुस्तकादि सुनते थे। श्री-सद्गुरु-सदन के पुस्तकालय की देख-रेख भी यही करते थे।

महात्माजी के परिचित प्रेमियों में से श्रीअवध वास करने वाले व्यक्तियों में जो बहुत समय बाहर रहते तो उनका बाहर रहना महात्माजी को अखरता था। वे कहा करते कि कहीं ऐसा न हो कि बाहर ही शरीर छूट जाय और वे श्रीअवध-वास से वंचित रह जायँ क्योंकि अवध में शरीर छूट जाना ही वास्तविक अवधवास है।

हमारे श्री बड़े महाराजजी ने अपनी मधुर-मंजुमाला के धाम-कांति में लिखा है—

इष्ट धाम में अचल बास विश्वास मान जो करते हैं।  
भुक्ति मुक्ति अभिलाख राख सम जान ताक पर धरते हैं।  
प्रबल अविद्या भीति चित्त तिससे कबहूँ नहिं डरते हैं।  
श्रीयुगलानन्य इष्ट धाम बिनु सदा जन्मते मरते हैं।

संवत् १९८६ के क्वार कृष्ण ७ बुधवार को प्रातःकाल आपके प्रिय गुरुभ्राता तथा स्थान के उत्तराधिकारी श्रीस्वामी भगवन्त शरणजी का शरीर छूट गया। आप कमजोर अधिक

थे इस घटना ने आपके चित्त को और भी दुखित कर दिया, किन्तु आप सदा प्रसन्न वदन ही रहते थे ।

दशहरे की छुट्टियों में अनन्य गुरु-भक्त कानपुर प्रेम नगर श्रीगुरुनिकुंज निवासी बा० प्रभुदयालशरणजी माथुर बी० एस० सी० आए हुए थे । वे जब आते थे तो श्रीमहात्माजी के निकट रहने के अतिरिक्त कहीं भी नहीं जाते थे । विशेष कमज़ोरी के कारण श्रीमहात्माजी मंदिर-सेवा में नहीं जाते थे । आसन पर ही रहते थे । चरण दाबते हुए श्रीप्रभुदयालशरणजी ने प्रार्थना की कि श्रीचित्रपट-सरकार की जीवनी क्या छपी है ? आपने कहा—हाँ, क्या तुम्हारे पास श्रीसदगुरु-चरित सुमिरनी नहीं है । उन्होंने कहा नहीं सरकार । होती तो मैं सरकार महाराज के जीवन-चरित से वंचित क्यों रहता ? यह सुन आपने कहा-विधु आते हैं । तब उनसे कहकर पुस्तकालय में देखावेंगे । अधिक प्रतियाँ होंगी तो तुम्हें मिल जायगी । और संक्षेप में हम तुम्हें बतला देते हैं । यह सुन उन्होंने चरणों पर मस्तक रखा और कहा— सरकारी बड़ी कृपा । पश्चात् आप पर्यंक पर बैठ गए और पर्यंक से लटकते हुए चरणों को श्रीप्रभुदयाल शरणजी सुहराने लगे और आपने यों कहना प्रारंभ किया :—

फैजाबाद जिले में श्रीअयोध्या से सात कोस दक्खिन मुबारकगंज से मिला एक मौजा कलाफ़र पुर है । उसका एक टुकड़ा "मेहरबानमिश्र का पुरवा" कहलाता है । वहाँ मेहरबान मिश्र नाम के एक सरवार-देशीय ब्राह्मण रहते थे । उन्हीं के नाम से यह पुरवा बसा है । मिश्रजी अत्यंत संपन्न गृहस्थ थे परंतु आपके चार पुत्र दो दो तीन तीन वर्ष के होकर मर गए ।

श्री प्रभुदयाल शरणजी बी० एस० सी०

श्री १०८ स्वामी राम वल्लभा शरणजी महाराज

अतः मिश्रजी बड़े दुखित रहते थे। बहुत दिन बाद वृद्धावस्था में जब मिश्रजी को कोई आशा न थी। तब अनायास भगवान की इच्छा से संवत् १८७६ में श्रीमहाराजजी का प्रादुर्भाव हुआ। मिश्रजी ने बड़ा उत्सव मनाया। आपकी माता बड़े लाड़-प्यार से आपका पालन करती थीं।

आपका नाम श्रीरमेशदत्तजी रखा गया और छठे वर्ष आपका विद्याध्ययन प्रारंभ हुआ। आपने पंडित ईश्वरीदत्तजी से संस्कृत तथा एक मौलवी से फारसी पढ़ना प्रारंभ किया। आपकी प्रज्ञा ऐसी प्रबल थी कि आप थोड़े ही दिनों में अपने से पहले के पढ़नेवालों से आगे निकल गए। मौलवी साहब तथा उनके कुटुंबी आप से बड़ी प्रीति करने लगे। जिस दिन आप मौलवी साहब के यहाँ पढ़ने न जाते मौलवी साहब के पुत्र आप से कारण पूछने के लिये आपके यहाँ आते। नवम वर्ष में आपका यज्ञोपवीत हुआ। ग्यारवें वर्ष आपका विवाह बड़े धूम-धाम से हुआ। खेल-कूद में आपकी रुचि न थी। हथियारों और घोड़े की सवारी का बड़ा शौक था। आपके पिताजी ने आपको एक टाँगन ले दिया था। और कुछ छोटे छोटे हथियार भी बनवा दिए थे। एक दिन एक पक्षी आपके निशाने से घायल होकर मर गया। उसी दिन से आपने निशाना लगाना छोड़ दिया।

उसी ग्राम में एक गणेशी बाबा नाम के गोसाईं रहते थे। उनके संसर्ग से आप श्रीशिवपूजन करने लगे।

मुबारकगंज में श्रीसरयूजी के समीप घृताचीकुंड है। श्रीस्वामी युगलानन्यशरणजी श्रीअवध से आए और वहाँ कुछ दिन वास किया। उन दिनों स्वामीजी मौनव्रत धारण

किए हुए थे। श्रीसीताराम के अतिरिक्त कोई पाँचवाँ अक्षर मुख से नहीं उच्चारण करते थे। आवश्यक बातें संकेत से अथवा पृथ्वी पर लिखकर करते थे। श्रीमहाराजजी भी स्वामीजी के के दर्शन करने के लिये गए। पूर्व संस्कार से श्रीमहाराजजी को स्वामीजी बहुत चाहने लगे। और उन्होंने आग्रहकर आपको युगल-मंत्र का उपदेश दिया। चौदह महीने यहाँ रहकर श्रीअवध को लौट आए।

इसके कुछ दिन बाद पंडित ईश्वरीदत्तजी का इकलौता पुत्र जो श्रीमहाराजजी का समवयस्क था, मर गया। पंडितजी को बड़ा शोक हुआ। उन्होंने श्रीमहाराजजी के पिता से कहा कि हमारा विचार कुछ दिन के लिये बाहर जाने का है। यदि आप श्रीरमेशदत्त को हमारे साथ कर दें तो इनका पढ़ना भी होता रहेगा और हमारा पुत्र-शोक भी भूल जायगा। श्रीमहाराजजी के पिता ने इसे स्वीकार कर लिया। और पंद्रह वर्ष की अवस्था में आप पंडितजी के साथ कोयल को गए।

कोयल में एक सूबेदार पंडितजी के स्नेही थे। उनकी प्रेरणा से पंडितजी की कथा पलटन में होने लगी। पंडितजी पलटन के कुछ अँगरेजों को हिंदी भी पढ़ाने लगे। कुछ दिन बाद पंडितजी तथा सूबेदार में कुछ अनबन हो गयी। संयोगवश सूबेदार को ज्वर आने लगा। लोगों ने सूबेदार से कहा कि जब से आपने पंडितजी से अनबन की है तभी से आपको ज्वर आ रहा है। सूबेदार पंडितजी के डेरे पर गए। उस समय पंडितजी वहाँ नहीं थे। श्रीमहाराजजी आसन पर थे। सूबेदार से बीमारी का वृत्तांत सुन उन्होंने एक कागज़ पर श्रीसीताराम

लिखकर दे दिया कि इसको गले में बाँध लो, ज्वर न आवेगा वैसा ही हुआ। तब तो सूबेदार पंडितजी से पहले से भी अधिक प्रेम-नेम करने लगा और यह बात सारे शहर तथा पलटन में फैल गई कि पंडितजी के शिष्य ने सूबेदार को अच्छा किया है।

पलटन के अँगरेज अफ़सर ने यह बात सुनकर श्रीमहाराजजी को बुलाकर उनका दर्शन किया। वह महाराजजी से बात-चीतकर बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने पंडितजी से कहा कि आज से मैं इन्हीं से पढ़ूँगा।

कुछ दिन बाद पलटन कोयल से अचानक को बदल गई। पंडितजी और श्रीमहाराजजी भी अचानक गए। अचानक कलकत्ते से ७ कोस पर है। दूसरे वर्ष साहब ने श्रीमहाराजजी से कहा कि यहाँ पलटन में श्रीरामलीला हो। श्रीमहाराजजी ने रामलीला कराई। पलटन के सिपाही लाल-काली वरदी पहनकर राक्षस और बंदर बने। बाजों के साथ झूठी लड़ाई दिखलाई गई, बड़ा आनंद हुआ।

उसी समय महाराजजी के पिताजी का देहान्त हो गया पंडितजी मकान चले गए। और श्रीमहाराजजी उसी ओर से काशीजी चले गए। काशीजी में आप विद्याध्यन करने लगे। बीस वर्ष की अवस्था में आप वहाँ से पढ़कर घर चले आए। इसी बीच आपकी पत्नी का देहान्त हो गया। आप से पुनर्विवाह के लिये बहुत कहा गया। परंतु आपने नहीं किया। पहले से ही आपका मन गृहस्थी में नहीं लगता था क्योंकि श्री बड़े महाराजजी ने आपको केवल मंत्र ही नहीं दिया था किंतु वैराग्य का बीज भी आपके हृदय में बो दिया था।

इसके पश्चात् आप प्रायः श्रीअवध की विहार-भूमि देखने और श्रीगुरु-दर्शन के लिये चले जाते। आपके भ्राता आपको लौटा लाते।

उसी बीच श्री बड़े महाराजजी श्रीअवध से चित्रकूट को चले गए। वहाँ से श्रीमहाराजजी को पत्र लिखा— यदि एक सप्ताह में आओगे तो उत्तम, पंद्रह दिन में मध्यम और महीने के बाद निकृष्ट। आप इस पत्र को पाते ही संसार से मुख मोड़ चित्रकूट को चल दिए और एक सप्ताह के अंदर ही वहाँ पहुँच गए। आपको साष्टांग दंडवत करते ज्योंही बड़े महाराजजी ने देखा त्योंही कहा—आ गए, उत्तम, उत्तमोत्तम और परमोत्तम हुआ। क्योंकि आप पत्र पाने के छठे दिन पहुँचे थे।

यहाँ कामाद्रि की परिक्रमा के स्थानों के दर्शन और संतों के साथ सतसंग करने से आपको बड़ा आनंद मिला। यहीं श्रीस्वामीजी ने आपसे कहा कि भिक्षा ले आओ। आपने कहा कि हमने तो भिक्षा कभी माँगी नहीं, हम कैसे माँगेंगे। स्वामीजी ने कहा कि तुमको माँगना न पड़ेगा। तुम्हारे पहुँचते ही लोग दे देंगे। ऐसा ही हुआ और बहुत दिनों तक गुरु-शिष्य बड़े आनंद से श्रीमंदाकिनी-तट पर रहे।

चित्रकूट से उठकर आप कलकत्ते आए। वहाँ से जगदीश पुरी की यात्रा की। पुरी से चलकर कामाक्षा पहुँचे वहाँ श्रीभगवती-मंदिर के पुजारी से आपका प्रेम हो गया। उसने विविध प्रकार से आपकी सेवा की। एक दिन आपको अपने निज के पूजा-स्थान में ले गया। वहाँ अनेक प्रकार के अस्त्र-शस्त्र थे और एक मनुष्य का सिर कटा हुआ रुधिर टपकता दिखाई पड़ा।

पर जब आपको यह देख अप्रसन्नता हुई और आपने वहाँ से चलना चाहा तो उसने रोका और परदा गिरा दिया तो वे सब सुगंधित पुष्प एवं मोहन-भोग आदि हो गए उसने आपको और विचित्र वस्तुएँ दिखाकर कहा कि क्या करें तुम वैष्णव-साधु के शिष्य हो। नहीं तो मैं तुम्हें शाक्त बनाता और बड़े मजे दिखाता। श्रीमहाराजजी कहते थे कि वह शाक्त सिद्ध पुरुष था। वहाँ से आप चित्रकूट को आए। परंतु श्रीस्वामीजी श्रीअवध चले आए थे। अतः आप भी उनके पास आकर निर्मली कुंड पर ठहरे।

आपके आने का समाचार सुन आपके भाई आए और आपको घर पर लिवा गए। परंतु वहाँ पर आपका चित्त नहीं लगा। और अयोध्याजी लौटकर श्रीस्वामीजी से बोले कि हमको यहाँ से हट जाना चाहिए क्योंकि यहाँ रहने से कुटुम्बी बारं-बार कष्ट देंगे। यह कहकर श्रीस्वामीजी से आज्ञा लेकर चार वर्ष तक काशीजी में रहकर विद्याध्ययन करते रहे।

एक बार श्रीकाशीजी में पं० बंदन पाठक जिन्होंने श्रीराम-चरितमानस की टीका की है। अहंकार से कहने लगे कि श्रीगोस्वा-मीजी की वाणी का जैसा अर्थ मैंने समझा है, किसी ने न समझा होगा। इस पर बाबा रघुनाथदासजी पंजाबी ने पूछा–

भइ रघुपति-पद प्रीति प्रतीती। दारुन असंभावना बीती।

इसमें दारुण असंभावना से क्या अभिप्राय है। पाठकजी चुप हो गए। बाबाजी ने पुनः कहा कि मैंने तर्क से प्रश्न नहीं किया। मुझे मालूम नहीं है। उस सभा में श्रीमहाराजजी भी थे, वे बोले मेरी समझ में यह आता है—

भगवत् के होने की शंका, जैसी नास्तिकों को होती है,

सो असंभावना है। भगवत् के अनेक चतुर्भुज आदि स्वरूपों में परस्पर स्वरूप न निश्चय होना, सो दारुण असंभावना है। सो शिवजी के वचन से श्रीपार्वतीजी की दारुण असंभावना नाश होकर, श्रीदशरथ-कुमार में परस्पर स्वरूप निश्चय होकर प्रीति प्रतीति हुई।

इस भाव को सुनकर दोनों महात्माओं ने श्रीमहाराजजी की प्रशंसा की।

देशाटन में आप गृहस्थों के मकान पर नहीं ठहरते थे। देवालय में, तीर्थ के तट पर या बस्ती के बाहर बाग में डेरा डालते थे। वहीं लोग पहुँच जाते और सेवा करते थे। कोई निर्धन पुरुष आग्रह करता तो उसके घर चले जाते पर धनिकों के यहाँ न जाते थे।

आप मनुष्य मात्र को तो प्रिय लगते थे ही, जंगली जंतु भी आपसे विरोध नहीं मानते थे। वर्षों के पर्यटन में दिन दिन भर आपको जंगल में चलना पड़ा। परंतु सदा मंगल ही रहा। इंद्रिय-दमनत्व आपमें पूरा था। युवा, सुंदर, स्वतंत्र होने पर भी कभी कोई इंद्रिय मन की आज्ञा से बाहर नहीं हुई। न मन ही इंद्रियाधीन हुआ। कई जगह कई सुंदर और धनिक स्त्रियाँ आपके रूप पर मोहित हो गईं परंतु आप उनसे वैसे बचे जैसे नारदजी इंद्र-प्रेरित काम-कौतुक से।

गदर के बाद आप काशी से कलकत्ता होते हुए गंगासागर पहुँचे। गंगाजी के दर्शन कर आपके मन में यह उमंग उठी कि गंगा के तीर तीर श्रीरघुवीर का स्मरण करते हुए अयाचक वृत्ति से पैदल ही श्रीगंगोत्री की यात्रा करनी चाहिए। आप

तुरत चल दिए और सुंदरवन की शोभा देखते हुए तीसरे दिन कलकत्ते पहुँचे। वहाँ से रामपुर आए। यहाँ गंगातट पर एक बंगाली बाबू के बाग में उतर पड़े। बाबू बड़े सज्जन तथा प्रेमी थे। उन्होंने आपकी बड़ी सेवा की और एक वर्ष तक कर्म-ज्ञान और उपासना का उपदेश सुनते रहे। एक दिन आप चुपके से वहाँ से चल दिए। और चार दिन चन्द्रनगर में रहकर चिंचुड़ा ग्राम में एक मंदिर में ठहरे। वहाँ के महंत ने आपका बड़ा आदर-सत्कार किया। आप कहते थे कि चिंचुड़ा के मंदिर ऐसी श्रीकिशोरीजी और श्रीरघुनाथजी की मूर्ति सारे बंगाल में नहीं है।

वहीं आपको रथयात्रा पड़ी। लोगों ने आपको उच्च सिंहासन पर श्रीरघुनाथजी के बराबर बैठाया। शतशः बंगाली नंगे सिर नंगे पैर रथ को खींचते थे। यह कौतुक देख आप बहुत प्रसन्न हुए।

वहाँ के महन्त आपके गुण और स्वरूप पर ऐसे मोहित हुए कि वे चाहते थे कि श्रीमहाराजजी यहीं रहें। मन्दिर और इलाका सब आपके नाम लिखाकर देने को तैयार थे। परन्तु एक दिन आप एकाएक वहाँ से चुपके चल दिए।

चिंचुड़ा से मुर्शिदाबाद आकर महन्त गोपालदास के यहाँ ठहरे। इनकी भी इच्छा थी कि आप महन्ती स्वीकार कर यहीं रहें। आप प्रतिष्ठा की बड़ी निन्दा किया करते और कहते—

प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा गौरवं शुद्धरौरवम्।
बहु मानं सुरापानं त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भवेत्॥

एक दिन आप वहाँ से भी चुपके से चल दिए। रास्ते

में भागलपुर, होते हुए सुल्तानगंज में रहे। वहाँ से चलने पर चौदह कोस तक कोई बस्ती नहीं मिली। आप थक कर एक वृक्ष के नीचे लेट गए। इतने में देखते हैं कि श्याम एवं गौर वर्ण के दो बालक सामने आ रहे हैं। उन्होंने आपसे पूछा—बाबाजी, क्या भूखे हो? आपने कहा—हाँ। थोड़ी देर बाद उन दोनों बालकों ने दो हाँड़ियाँ और दाल-चावल ला, जंगल से लकड़ी तोड़, दाल-भात बना, आपसे कहा—बाबाजी, उठिए, प्रसाद तैयार है। आप उठे, प्रसाद पाया, उन बालकों से कहा—तुम भी पाओ। वे बोले—अपने घर पर पावेंगे। यह कहकर अन्तर्धान हो गए। प्रातःकाल आपने खोज की। कोसों बस्ती का पता न था। महाराजजी कहते थे कि उस दाल-भात का स्वाद अलौकिक था।

वहाँ से राजमहल, मुँगेर आदि होते हुए आप पटना पहुँचे। और प्रसिद्ध हर मन्दिर में ठहरे। उदासियों एवं पुरवासियों ने आपकी बड़ी सेवा की।

इसी प्रकार लीला करते हुए काशीजी, मिर्ज़ापुर, कानपुर, फर्रुखाबाद आदि शहरों में ठहरते हुए आप हरिद्वार पहुँचे। वहाँ से गढ़वाल होते हुए गंगोत्री पहुँच गए।

गंगोत्री से लौटने पर हृषीकेष में श्रीअयोध्याजी के एक संत मिले, जिनके हाथ श्रीस्वामीजी ने एक पंखा भेजा था और एक पत्र में लिखा था कि यह पंखा नहीं पंख है, पंख पाते ही उड़ आओ। बहुत दिनों से तुमको देखा नहीं है। पंखा और पत्र पाते ही आप वहाँ से रेलगाड़ी पर बैठ श्रीअयोध्याजी आए और गुरु महाराज का दर्शन किया।

कुछ दिन गुरु-सेवा में रहकर आपने विचार किया, 'दरवेश खाँ रहे तो बेहतर, आबे दरिया बहे तो बेहतर।' और चुपके से चल दिए। आगरा शहर में जाकर राधास्वामी के यहाँ ठहरे, इनको रायवृन्दावन बहादुर द्वारा आपके आगमन की सूचना मिल चुकी थी। राय शालिग्राम बहादुर आपकी सेवा में उपस्थित किए गए। उन्होंने आपकी सेवा बड़े आदर-भाव से की।

एक दिन राय शालिग्राम बहादुर ने आपसे पूछा कि आप हमारे स्वामीजी को कैसा समझते हैं। आपने कहा—अच्छे संत हैं। वे बोले—हाँ, अच्छे संत ही जानते हो। वे इस काल में भगवत् का अवतार हैं। आपने कहा—तुम गुरुभक्त हो, तुमको ऐसा ही जानना योग्य है।

वहाँ से श्रीवृंदावन आए। कई मास यहाँ रहे। श्रीतुलसी-रामजी जिन्होंने उर्दू में भक्तमाल की रचना की है। तथा शाह कुन्दनलालजी से आपका बड़ा प्रेम रहा। जिस समय श्री-शाहजी कहते श्रीराधेश्याम और आप कहते श्रीसीताराम, उस समय परस्पर बड़ा आनन्द होता। वहाँ के विशेष स्थानों में घूम-घूमकर आपने दर्शन किए। वहाँ की ठाकुर-सेवा की आप बड़ी प्रशंसा करते थे। श्रीगोस्वामी मधुसूदनदासजी की श्रीमद्भागवत की कथा आपने सुनी, उनकी भी आप प्रशंसा करते थे।

वहाँ से दिल्ली आकर आपने निजामुद्दीन औलिया की समाधि तथा अन्य प्रसिद्ध स्थानों को देखा। वहीं डिप्टी भास्कर राव से जो बहुत दिन श्रीअवध में रहे हैं और आपसे पूर्व-परिचय

था, भेंट हुई। उन्होंने आपकी बड़ी सेवा की। और आपका पंजाब जाने का विचार जान अव्वल दर्जे के डिब्बे में बैठाकर आपको अमृतसर भेज दिया।

अमृतसर पहुँचकर आपने सिक्खों के गुरुद्वारा को देखा। यह स्थान अत्यंत रमणीक है। आप कहते थे अष्ट प्रहर उत्साह केवल वहीं होता है। वहाँ से लाहौर आए। लाहौर में बाबा अटल सिंहजी की समाधि के दर्शन किए। आप प्रायः इनका इतिहास कहा करते थे। कुछ दिन पंजाब में रहकर आप वृंदावन चले आए। और वहाँ कुछ दिन रह कर श्रीअवध लौटे।

श्रीअवध में कुछ दिन रहकर आप फिर मिथिला को चले गए। रास्ते में मधौल पहुँचकर बाबू भीमसिंह की वाटिका में ठहरे।

अहल्या-स्थान से अयोध्याजी आकर कुछ दिन गुरुसेवा करके आपने श्रीबद्रीनारायण की यात्रा की। वहाँ से लौटकर कुछ दिन पश्चात् पुनः श्रीजनकपुर लौट गए। इस यात्रा में आपने श्रीकमला नदी के तट पर कुटी बनाकर वास किया।

उसी कुटी में एक दिन श्रीरामशोभादासजी संत (जो थोड़े दिन हुए अयोध्याजी में बड़ी छावनी में रहते थे) अपने गुरुजी तथा अन्य षोड़श मूर्तियों सहित आपसे मिलने के लिए गए। उस समय चार बजे थे, सत्संग में रात होगई। सब संत वहीं रह गए। प्रातःकाल सब संत श्रीकमलाजी में स्नान करने के लिये गए। श्रीमहाराजजी के मन में आया कि रात को सब संत यहीं रहे, कुछ प्रसाद न हुआ। इस बेला कुछ होता तो अच्छा था। जैसे ही संत स्नान कर लौटे और आपसे

विदा माँगनी चाही कि एक आश्चर्यजनक चरित्र देख पड़ा।

एक कुमारी एक डलिया में महीन चूड़ा, चीनी तथा हाँड़ी में दही लिए हुए आई। सब वस्तु श्रीमहराजजी के सामने रखकर बोली—हमारी माता ने कहा है कि बाबाजी को दे आओ। यह कहकर अन्तर्ध्यान हो गई। संत चकित होकर आपके चरणों पर गिरे और बोले—धन्य हैं आप।

श्रीमहाराजजी ने वही पदार्थ संतों को पवाया। मिथिलाजी का दही प्रायः स्वादिष्ट होता है परंतु उस दही का स्वाद कुछ निराला ही था। सब संतों ने यही कहा कि हमने आजीवन ऐसा दही नहीं खाया। पश्चात् वे सन्त लोगचले गए। आप भी कुछ समय बाद श्रीअवध आए।

श्री बड़े महाराजजी ने आपसे कहा। अब तो तुम बहुत घूमे। अब श्री अवध से न जाते तो अच्छा था। आपने हाथ जोड़कर प्रार्थना की एक बार और पंजाब जाने का विचार है। इसके बाद सरकारी आज्ञा का पालन करूँगा। और कुछ दिन रह चुपके* पंजाब चल दिए। पंजाब में ही आपको श्री बड़े महाराज की बीमारी का तार प्राप्त हुआ। और आप चल दिए। अगहन कृष्ण ७ सं० १६३३ की संध्या में श्रीअवध पहुँचे। इधर श्री बड़े महाराजजी प्रातःकाल ही साकेत

---

* एक बार आपके गुरुभाई श्रीजनकनन्दिनीशरणजी ने कहा कि आप आते हैं और चलने के समय श्रीमहाराजजी के दर्शन भी नहीं करते और एक पुरजा छोड़ चुपके से चल देते हैं इसका क्या कारण? आपने कहा एक तो श्रीअवध वास और गुरु-दर्शन से विमुख हों और कहकर जायँ। यह क्या उचित है? ऐसा करने से दुख होता है।

चल चुके थे। आपने श्री बड़े महाराजजी से श्रीअवधवास का वचन दिया था इससे आपका अखंड श्रीअवध बास रहा। और माघ अमावस १९५८ श्रीसरयूकुंज में निवास किया। यह सुन बाबू प्रभुदयालशरणजी ने श्रीचरणो पर शिर रख दिया और आपने आशिर्वाद दिया।

आपने विधुजी से कहा कि बच्चा चित्रा नक्षत्र आ गया है अतः पुस्तकालय की पुस्तकें सुखा लेते तो अच्छा था, क्योंकि चित्रा में पुस्तकें सुखाने से फिर १ वर्ष के लिए सुखाने की छुट्टी रहती है। विधुजी यह आज्ञा सुन बड़े प्रसन्न हुए और दूसरे दिन मंदिर की छत पर पुस्तकें सुखने दी गयीं। साथ में बाबू प्रभु-दयालशरणजी भी थे। धूप बड़े कड़ाके की थी और पुस्तकें उल्टी जा रही थी कि देखा पीछे श्रीमहात्माजी कृपा की छाँह किये खड़े हैं, विधुजी ने कहा कि सरकार ऐसी धूप में क्यों कष्ट किये हमलोग तो कार्य्य कर ही रहे थे, आपने कहा कि हमारे बच्चे घाम में हों और हम छाया में रहे? यह ठीक नहीं। यह सुन विधुजी और बाबू प्रभुदयालशरणजी पुस्तकालय* वाले कमरे में आपको लेकर चले आये। तब बैठकर आपने कहा कि एक बार किले पर श्रीमहाराजजी की पुस्तकें सूखती थीं और हम पुस्तकें के उलट-पुलट रहे थे पसीने से तर थे कि छाया जान पड़ी घूमकर देखा तो श्रीमहाराजजी छाता लगाये कृपा की छाँह किये खड़े थे देखकर मैं थर्रा गया और कहा सरकार क्यों ऐसा कष्ट कर रहे हैं तब आपने कहा कि मेरा बच्चा

---

* यह कमरा मन्दिर के फाटक पर है। इसी में श्री भगवन्तशरणजी रहते थे उनके शरीर छूटने पर इसी में पुस्तकालय चला आया।

पसीने से तर हो रहा है और हम कैसे देखते रहें, चलो सुस्ता लो फिर आना। वैसे ही तो हमारे लिये तुम लोग हो, यह सुन दोनों गुरुभाई पैरों पर गिर पड़े। आपकी दयालुता की जै।

बाबू प्रभुदयालशरण जब कानपुर जाने के लिये आज्ञा माँगने के लिये हाथ जोड़कर खड़े हुए तब आपने हाथ में लौंग का कटोरा ( जिसमें लायची भी थीं ) लिया और कहा कि बच्चा जाओ, हो आओ। क्योंकि वहाँ तो पाही है। असली घर तो यहाँ है। और यह लौंग तथा लायची लो। लाभ के सहित लौटा के लावे इसलिए लौंग दी जाती है।

दुनिया की फिक्र चाहे तुझे सौ लगी रहे।
आशिक की यही शर्त उधर लौ लगी रहे॥

कहकर आशीर्वाद दिया। वे दंडवत कर चले गए। सभी शिष्य एवं प्रेमियों को विदा करने की आपकी यही रीति थी।

जब कोई सेवक आपका पूजन कर आरती करता तो आप यह पद कहते—

श्रीसद्गुरु की आरती करि तन मन धन वारती।
बालारुन दुति झलक रह्यो तन मोह निसा नास्यो अघ तमगन
भयो प्रकास प्रमोद परम बन हिय दल-कमल पसारती।
दिव्य बसन-भूषन तन साजैं रामनाम अंकित अति राजैं
जाहि निरखि रति-पति बहु लाजैं सो छबि नैन निहारती।
संग सखी सुकुमारी सोहैं छत्र व्यजन स्रग चंदन ल्यों है।
धरी घंट करतार बजो है कोइ सखी चँवर सुढारती।
जुगलविहारिनि जुगल चरन परि कृपा प्रसादी पाय कोंछ भरि
श्रीगुरु सोभा नख सिख हिय धरि कनक महल सुपधारती।

और यह कहते थे कि जब कोई श्रीमहाराजजी की आरती करने लगता तब हम इस पद को गाते थे।

आप कहते थे कि जब किले पर थे तब श्रीमहाराजजी के कुंज के सामनेवाले आँगन में देखा कि एक गौरैया खूब कूद कूद कर चावल बीन रही थी। इतने ही में एक बाज आया और उसको झपटकर ले गया। इस खेद में थे ही कि जल बरसने लगा जिससे चित्त में शान्ति आई। जल थोड़ी देर बरसकर शांत हो गया। इन घटनाओं को देख 'भगवत की लीला पर आश्चर्य हुआ। और यह पद याद आया —

छिन में मेह बरसते देखा, छिन में हो गया सप्पासप्प।
छिन में चिड़िया चुनते देखा, छिन में गल कटाया झप्प।
अलख पुरुष करतार की बातें जोई चाहे सोई करै।
सूखी भरै भरी ढरकावै जब चाहै तब फेर भरै।

मंगलवार को आप श्रीहनुमानजी अवश्य जाते थे और वहाँ डेढ़ रुपये के लड्डू चढ़ाते थे। जब से आप अस्वस्थ रहने लगे तब से श्रीमहावीरशरणजी पुजारी श्रीहनुमानजी जाया करते थे। कभी कभी जब पंडित श्रीरामभद्रशरणजी ( पं० बलभद्रप्रसाद बी० ए० ) मोटर लेकर आते और कहते भाई साहब श्रीहनुमानजी चलिए। तब आप चल देते एक बार एक मंगलवार की बात है कि पंडितजी आए और आपसे चलने के लिये कहा। आपने निकट बैठे हुए विधुजी से कहा कि बच्चा! चलो, विधुजी उठे और तनजेब की अधबहियाँ और कंटोप तथा चद्दर धारण कराई। छड़ी ले जब आप खड़े हुए तब विधुजी ने श्रीमिथिलादासजी से कहा कि भाई साहब प्रसाद के वास्ते

रुपए दीजिए (उस समय रुपए-पैसे सब मिथिलादासजी के पास ही रहते थे और हिसाब-किताब भी वही रखते थे)।

मिथिलादासजी ने जरा तीखे स्वर में कहा तुम हालत जानते हो। तब भी कहते हो। यह सुन श्रीमहात्माजी ने विधुजी से कहा कि तुम क्यों माँगते हो? तुम्हें जो कुछ माँगना हो वह हमसे माँगा करो। तुम्हें देने के लिये तो हम हैं ही। अब तुम दूसरे से न माँगा करो। चलो, कहकर चल दिए। विधुजी इस उधेड़-बुन में पड़े कि क्या होगा। हलवाई के सामने मोटर खड़ी हुई और हलवाई ने लड्डू की हंडी लाकर दी। विधुजी आपका मुख देखने लगे। महात्माजी ने कहा कि रुपए चाहिए? उन्होंने कहा कि हाँ। आपने दाहिने हाथ के बीच की दो अँगुली जेब में डाली और जेब को हिलाते हुए रुपए निकालने लगे। तथा निकाल-निकाल कर एक दो तीन करते हुए जब पाँच रुपए विधुजी को दिए तब उन्होंने कहा—बस, और उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि खाली बंडी तो हमीं ने पहनाई। उसमें रुपए कहाँ से आ गए। आपकी महिमा समझ में नहीं आती। दर्शन कर वहाँ से लौट आए।

विधुजी ने आपसे कहा—सरकार हमें एक माला दें। आपने कहा तुम्हारी माला क्या हुई। उन्होंने कहा कि हमारी माला रामदुलारी ने ले ली। क्योंकि उसकी माला चूहा ले गया था अतः एक ही से दोनों का काम चलता था। आपने कहा—गुरु की दी हुई चीज़ इस तरह खोते हो। देखो हमारी यह माला अड़तालिस वर्ष की है, कई बार खोयी और श्री-हनुमंतलालजी को पाँच-पाँच रुपए का प्रसाद चढ़वाकर मिली।

कहकर एक सुन्दर तुलसी की माला विधुजी को देकर कहा अब इसे जीवन भर न खोना, याद रहे। वही माला विधुजी के पास है।

बीमारी की अवस्था में आप बहुत हँसते थे। आपका हँसना देखकर बहुत से लोग तरह-तरह के संदेह करते और आपसे हँसने का कारण पूछते। तो आप उन लोगों को जो जैसा होता उसे वैसा ही उत्तर दे देते। एक बार चरण दबाते समय विधुजी ने आपसे कहा— सरकार! आपने कहा— हूँ। विधुजी ने कहा--कि लोग मुझे कहते हैं कि आप महाराजजी को बहुत हँसाते हैं। अतः सरकार कृपाकर हमें यह बता दें कि आप इतना क्यों हँसते हैं। आपने कहा--हाँ? अब तुम भी पूछोगे। अच्छा औरों को तो जैसे-तैसे बताया पर तुम्हें ठीक बताते हैं। यह कह आप बैठ गए। और कहा कि देखो यही शरीर है जो दोनों हाथों में दो घड़े लिए तीन-तीन चार-चार सौ घड़े पानी किले की सीढ़ियों पर चमकते हुए चढ़कर भरता था। और अब वही शरीर है कि जिसे मिथिलादास और तुम उठाते हो तब शारीरिक काम करता है। इसी को विचार कर और यह याद कर कि

'इन नैनों का यही बिसेख। वह भी देखा यह भी देख।'

कहते हुए संसार की गति पर हँसते हैं और खूब हँसते हैं। कहकर हँसने लगे।

श्री रामप्रसादशरणजी ( पं० गणेशप्रसाद मिश्र ) श्रीरामायणजी के बड़े अच्छे वक्ता हैं। गोंडा जिले के रहनेवाले हैं और आपके गुरुभाई हैं। रंगून आदि घूमकर अब कलकत्ते

में रहते हैं। वहाँ की कलक्टरी कचहरी की रामायण-सभा के आप ही प्रधान वक्ता हैं। उस सभा में हजारों की भीड़ होती है। श्रीमहात्माजी की शिष्य-मंडली भी वहाँ काफी है। वह मंडली इनमें गुरुवत् व्यवहार रखती है। ये महात्माजी को गुरु के समान ही मानते थे। इन्होंने श्रीसद्गुरु-सदन के सामने सेवक-सदन नाम का एक मकान बनवाया है। ये श्रावण में आते और सेवक-सदन में झूला डालते और उस झूले में महात्माजी को बड़े अनुराग से झुलाते, गान तान होता प्रसाद बँटता वह दृश्य दर्शनीय होता था।

भाद्र का महीना था। लोगों ने आपसे अनुरोध किया कि मन्दिर का भावी उत्तराधिकारी सरकार चुन दें। आपने उन लोगों की प्रार्थना स्वीकार कर ली और भाद्र शुक्ल द्वादशी गुरुवार संवत् १९८७ को संध्या समय मन्दिर में सबको बुलाया। बुलाए व्यक्तियों में बाबू किशोरीरमणप्रसादजी बैंकर काशी, बाबू प्रभुदयालशरणजी माथुर बी० एस-सी०, कानपुर और डॉ० प्रभुदयाल श्रीवास्तव एम० बी० अयोध्या अस्पताल मुख्य थे। जब नाम चुने जाने लगे तब श्रीसियाविहारी शरण-जी (श्रीमहात्माजी के शिष्य) ने भरी सभा में निवेदन किया कि हमारा नाम न रखा जाय उनकी यह प्रार्थना स्वीकार की गई। और गुरुभाई श्रीपुरुषोत्तम-शरणजी तथा शिष्य श्रीरामकृपालुशरणजी के नाम दो कागज पर श्रीविधुजी से लिखाकर और एक ही सा मोड़वाकर श्री-महात्माजी मन्दिर में जाकर श्रीगुरुदेव महाराज के निकट छोड़ कर आए और बैठ गए। मन्दिर का पर्दा गिरा रहा।

श्रीमहावीरशरणजी पुजारी से कहा कि महाराजजी से प्रार्थना कर एक चिट्ठी उठा लाओ और पर्दा खोल दो। उन्होंने चिट्ठी लाकर हाथ में दी। आपने वह चिट्ठी बगल में बैठे हुए श्रीधर्म-भगवान को दे दी। श्रीधर्मभगवान ने चिट्ठी खोली तो श्रीपुरुषोत्तमशरणजी का नाम निकला। और जोर की आवाज से सबको सुना दिया गया कि श्री पुरुषोत्तम शरणजी भावी उत्तराधिकारी बनाए गए। पश्चात् कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी को बंद लिफाफा में वसीयतनामा जज साहब के यहाँ दिया गया। जिस वसीयत में आपने अपने बाद के लिये मन्दिर का प्रबन्ध कमेटी के हाथ सौंपा। उस कमेटी के मेम्बर श्रीपुरुषोत्तमशरणजी, श्रीलक्ष्मणशरणजी (श्रीजानकीघाट)। श्रीमिथिलाशरणजी, बाबू किशोरीरमण प्रसादजी काशी, बाबू प्रभुदयालशरणजी माथुर बी० एस० सी० कानपुर पंडित कालिकाप्रसाद मिश्र वकील हाईकोर्ट फैजाबाद और बाबू कुन्दनलाल अग्रवाल अयोध्या बनाए गए तथा पूरा अधिकार उन्हीं लोगों को दिया गया। भावी उत्तराधिकारी का निर्वाचन कमेटी के मेम्बरों द्वारा होकर मंदिर से चिट्ठी निकलने पर होगा। तथा श्रीपुरुषोत्तमशरणजी के बाद अधिकारी श्रीमहात्माजी के चेला, नाती चेला परनाती चेलों में से ही चुने जायँगे। और श्रीसद्गुरु कृपा-कुंज की सेवा-पूजा राग-भोग का भार श्रीसियाबिहारीशरण को सौंपा।

अगहन में श्रीमिथिलादासजी ने आपसे निवेदन किया कि हमारे जिम्मे जो लेन-देन और हिसाब-किताब रहता है उसे सरकार किसी दूसरे के जिम्मे करें हम केवल सेवा ही करेंगे।

श्रीरामविधुशरणजी, श्रीस्वामी भगवन्तशरणजी, श्री १०८ स्वामी रामवल्लभाशरणजी, श्रीमिथिलादासजी, श्रीसरयूशरणजी,

इसे स्वीकार कर खजाना और लेन-देन का व्यवहारिक कार्य विधुजी को सौंपा और वे इसे करने लगे। स्थान का प्रबंध श्रीधर्म-भगवान करने लगे। जब इस प्रकार प्रबन्ध हुआ तब श्रीमिथिला-दासजी से लोगों ने कहा कि अब आप दूध छोड़कर अन्न पाया कीजिए। यह सुन श्रीमिथिलादासजी ने स्थान से दूध लेना छोड़ दिया। यह बात विधुजी को खटकी और उन्होंने गुरुभाइयों से कहकर उनके दूध के खर्च की व्यवस्था कर दी। जिनमें गया के श्रीरामविश्वेश्वरशरणजी इन्सपेक्टर और श्री प्रभुदयालु शरणजी कानपुर मुख्य हैं।

माघ कृष्ण अमावस्या को श्रीसतगुरु भगवान का भंडारा होता है। श्रीमहात्माजी पंगत में बैठे पा रहे थे। (आपकी यह पंगत श्रीसिया सुहाग बाग में गुरुभाई और शिष्यों के साथ थी) कहा—पुरुषोत्तमशरण! उन्होंने नहीं सुना। तब श्री-मिथिलादासजी ने कहा—काकाजी! सरकार कुछ कहते हैं। यह सुनते ही वे सामने उठकर आगए। आपने दाहिना हाथ उठाते हुए कहा-श्रीमहाराजजी का भंडारा इसी प्रकार हुआ करे। इसमें त्रुटि न होने पावे। यह सुन उन्होंने कहा जैसी आज्ञा होगी वैसा ही होगा और पाने लगे।

एक दिन संध्या समय पाँच बजे श्रीमिथिलादासजी श्री-सरयूजी से आए। (उस समय विधुजी भी वहीं बैठे थे) और कहा कि अभी तो सरकार के सामने हम सब कुछ करते धरते हैं। बाद हमारा एक मिनट भी श्रीसदगुरु-सदन में रहना कठिन होगा। यह सुन आप पलँग पर उठ बैठे और आवेश में आ कहा—बच्चा, समय सदा आनंद से ही बीतेगा और श्रीसत्गुरु-

और बड़े उत्साह से आकर उसने महात्माजी की पूजा की।

संवत् १६८८ के अगहन मास में किले पर के श्रीरामदेवशरणजी आए। और दण्डवत कर श्रीचित्रकूट जाने के लिये आज्ञा माँगी। और यह भी कहा कि वहाँ कहीं ठहरने के लिये जगह बता दी जाय। आपने विधुजी से परमहंस श्रीयुगलविनोदविहारीशरण, जानकी-कुंड श्रीचित्रकूट के नाम पत्र लिखवा दियाकि श्रीरामदेवशरणजी जाते हैं इन्हें आप अपने स्थान पर रखिएगा। और श्रीरामदेवशरणजी को लौंग देते समय कहा कि तुम वैशाख के पूर्व जल्दी लौटना। उन्होंने कहा कि जैसी सरकारी मरजी। आपने कहा—तुमको लौटना होगा। तुम्हारा काम है। वे दण्डवत कर चले गए।

फाल्गुन का महीना था। श्रीमिथिलादासजी श्रीमहात्माजी को स्नान करा पलँग पर पधराकर लोटा लिये स्नान करने जा रहे थे। श्रीसियासुहागबाग के सिंहासन के निकट पहुँचते ही देखा कि किले के महंत श्रीलखनलालशरणजी बड़ी तेजी से आ रहे हैं। और उन्होंने पूछा-मिथिलादास 'रामवल्लभाशरण' कहाँ हैं। मिथिलादासजी ने उत्तर दिया—पलँग पर बैठे हैं। कहकर महंतजी के साथ वे भी लौट आए। कहा--सरकार श्रीमहंतजी आए हैं। यह कहकर आपको उठाकर पलँग पर बैठा दिया। महंतजी आपके निकट पहुँचते ही बड़े ज़ोरों से रोने लगे। और मिथिलादासजी ने कुर्सी लाकर पलँग के पास रख दी। आप भी रोए महंतजी ने रोते हुए कहा—मिथिलादासजी! हमने इनके साथ कुछ भी करने से बाकी नहीं रखा और इन्होंने हमें कभी आधी जबान नहीं कही। अब हमारे अप

राध को यही क्षमा करें तो हो सकता है। आपने गले लगाते हुए और धैर्य देते हुए कहा—भाई तुम्हारा कोई दोष नहीं वह सब समय का फेर है। जैसा समय आता है वैसा ही होता है। तुम इसकी चिंता न करो, हमें इसका दुःख नहीं है। तुमसे कोई भी अपराध नहीं हुआ। बहुत देर तक बैठे रहने और वार्त्ता-लाप के उपरांत महंतजी वहाँ से उठकर बाबू कुंदनलाल अग्रवाल के यहाँ गए। वहाँ पर यह घटना उनसे कहकर कुछ देर बैठने के उपरांत किले पर चले गए।

वैशाख शुक्लपक्ष अष्टमी को प्रातःकाल मुख धोते समय आपने श्रीमिथिलादासजी से पूछा कि आज कौन तिथि है? उन्होंने कहा—आज अष्टमी है। कल श्रीजानकी नौमी होगी। आप यह सुन चुप रहे, मिथिलादासजी ने पूछा—सरकार तिथि क्यों पूछ रहे हैं? आपने कहा यों ही। स्नान कर आप पलँग पर आ गए। और श्रीमिथिलादासजी स्नान करने गए। उसी समय आपकी शिष्या श्रीजनकजादेईजी आईं। और आपका पूजन कर इत्र लगा आरती की। आपने श्रीजनकजादेई से कहा कि वह दिन कब आएगा? उन्होंने कहा कौन दिन? आपने कहा मंगलमय। उन्होंने कहा--सरकार पहले हमारा शरीर छूट जाता तब जो होता सो होता। यह सुन आपने कहा—हमारी जब इच्छा होगी तब तुम्हारा शरीर छूटेगा। यह सुन जनकजा-देई आँखों में आँसू भरे वहाँ से चली गईं।

शनिवार को श्रीकिशोरीजी की नौमी थी आपको नित्य कृत्य से निवृत्त करा पलँग पर पधरा श्रीमिथिलादासजी वैद्यजी को बुलाने को कह स्नान करने चले गए। (क्योंकि आपको ज्वर काफी था)

इतने में एक संत विधुजी को गोद में लेकर आए। क्योंकि उनका पैर कट चुका था और कुछ जख्म मौजूद था। उसी समय एक आदमी ने श्रीसियासुहागबाग में स्नान से लौटे हुए श्रीमिथिलादासजी से पूछा कि श्रीविधुजी किसका नाम है? उन्होंने हँसकर कहा श्रीविधुजी को पहचानना कोई बड़ी बात थोड़ी ही है जिसका पैर कटा हो उसे जान लो कि विधुजी हैं और उसको साथ लिवा लाए और कहा—विधुजी तुम्हें ये ढूँढ़ते हैं। विधुजी ने पूछा—कहिए आप कहाँ से आए हैं और क्या है? उसने पत्र देते हुए कहा कि हम सीता-पुर जेल से आ रहे हैं और श्रीरामजानकीशरण जेलर ने हमें भेजा है। विधुजी ने चिट्ठी लेकर पढ़ी जिसमें दरबार के लिये कुछ रुपए भेजने का उल्लेख था और उस व्यक्ति को शरणागत कराने के लिये लिखा था। विधुजी ने उक्त व्यक्ति से पूछा—तुम कितने रुपए खर्च करना चाहते हो? उसने पाँच रुपए निकाल कर दिए और कहा इतना हमारे पास है। आपने कहा कि दो रुपए रखो। जिसे चलते समय महा-राजजी को पूजा देना और एक रुपया यह लो शरणागत होने पर पूजा देना। जाओ स्नान कर आओ। वह स्नान करने गया और इधर एक रुपए की चद्दर तथा एक रुपए में माला, फूल, प्रसाद कपूर आदि मँगवाया। वैद्यजी आए और देखकर व्यवस्था कर चले गये। वह आया और श्रीपुरु-षोत्तमशरणजी भी आए। बाबू कुंदनलाल अग्रवाल भी बैठे थे। तथा श्रीमहावीरशरणजी पुजारी ( जो श्रीमहात्माजी को तिलक स्वरूप करने के लिये प्रातःकाल आते थे ) आए और महा

त्माजीको तिलक लगाया। इतने में विधुजी ने शरणागत-वाली डलिया मँगवाई और श्रीपुरुषोत्तमशरणजी से कहा कि ये शरणागत होंगे। श्रीपुरुषोत्तमशरणजी ने तिलक आदि कर मन्त्रोपदेश करना चाहा तब वह हटा और बोला कि हम तो महाराजी से शरणागत होंगे। उसको बहुत समझाया पर उसने एक न मानी। तब विधुजी ने मिथिलादासजी को बुलाकर कहा—देखते हो। श्रीमिथिलादासजी ने भी समझाया पर उसने एक न सुनी और कहा कि हम श्रीमहाराजजी से मंत्रोपदेश लेंगे, नहीं तो न लेंगे। श्रीमहाराजजी को ज्वर अधिक हो गया था। किन्तु मिथिलादासजी ने पलँग के पास जाकर कहा कि सरकार सब जान ही सुन रहे हैं। यदि मंत्रराज का उपदेश कर दिया जाता तो अत्युत्तम होता। आपने हाथ उठा कर इशारा किया। श्रीमिथिलादासजी ने पलँग से उठाकर नीचे आसन पर बैठाया और पूरा मंत्रोपदेश कर पूछा तुम्हारा क्या नाम है। उसने कहा—शिवकुमार आपने कहा कि रामकुमारशरण नाम होगा। उसने रुपया चरण पर रख दण्डवत किया। महात्माजी पलँग पर लेट रहे। यही आपका अंतिम शिष्य है।

रविवार की रात्रि में ज्वर कम था पर कफ़ बढ़ा हुआ था। बहुत से लोग एकत्र थे। नाम-ध्वनि हो रही थी। तीन बजे रात्रि में श्रीमहावीरशरणजी से मंदिर की सेवा करने के लिये श्रीधर्म भगवान ने कहा। वे गये और सेवा की। सोमवार एकादशी को प्रातःकाल ६॥ बजे ज्योंही मंदिर की आरती का घड़ी घंट बजा त्योंही आपने महल की तैयारी की। यह समाचार बिजली-सा

फैल गया। किले पर से महंतजी, रामदेवशरणजी आदि भी आए और श्रीरामदेवशरणजीने आपको स्नान कराया। बदलने के लिये वस्त्र लेकर लोग खड़े ही थे कि श्रीरामदेवशरणजी ने कहा--नहीं, पूजा की संदूक में धोया हुआ अँचला रखा हुआ है। ( यह वही बत्तीस वर्ष का पुराना अँचला था जिसे श्रीगुरुदेव ने चलते समय स्नानकर उतारा था और आपने श्री-रामदेवशरणजी से कहा था कि कौन भाग्यवान होगा जो मुझे इसे पहनावेगा? अतः तुम्हें ही यह काम करना होगा) वह अचला आया। धारण कराया गया। पूर्ण शृंगार कर सुंदर सजे विमान पर सवार हो बड़े धूम से आप चले। और श्रीरामघाट पर श्रीसरयू-कुंज में जाकर विश्राम किया।

श्रीसियासुहाग-बाग में चित्रपट रूप से आप विराजे। और आपके शिष्य श्रीरामदेवशरणजी सेवा-पूजा का लाभ लेने लगे। समय पर बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ अवधवासी महानुभावों का भंडारा हुआ। सब प्रेमी बाहर से आए। और आपके दर्शन कर............।

दोहा

माधव निधि[९] सिधि[८] रत्न[९] विधु[१], सित-हरिबासर चंद।
श्रीसतगुरु भगवान जू, बसे महल सानंद॥
'विधु'

# शुद्धाशुद्ध पत्र

| …ष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| …धुविनय | १९ | जब तन | जब तक तन |
| …पांजलि | ९ | रत | ररत |
| ,, | १० | विनु | विधु |
| …ु परम्परा | १४ | प्रशस्तवान | प्रशास्तवान् |
| ,, | १६ | अतानन्द | अतानन्द |
| ,, | १० | श्रीहनुमानजी | श्रीहनुमानजी महाराज |
| ,, | २७ नं० ३८ | श्रीजानकी वर श्रीशरण | श्रीजानकीवरशरण |
| …रक्त शिष्य | ८ नं० ७ | कान्तशरण | श्रीकान्तशरण |
| ,, | ९ नं० ४० | सीतारामशरण (काशी) | सीतारामशरण |
| ४ | ८ | प्रातःकाल | सायंकाल |
| ८ | २ | लगाते। | लगाते। शुभ समय में ब्याह हुआ। |
| …८ | ३ | नया | गया |
| …९ | २२ | मन में | मन्द |
| २० | १ | करके | की |
| २१ | २० | मधुकण | मधुकरी |
| २६ | २४ | कटोरा | कटोरे |
| ३१ | २० | रहेगा | नहीं |
| ३७ | १ | अवस्था | अवस्था थी |
| ३७ | २३ | श्रीगुरुदेवजी सेवा | श्रीगुरुदेवजीकी सेवा |
| ४४ | १२ | कृपा समझा | कृपा समझी |
| ४५ | १४ | सूर किशोरीजी | सूर किशोरजी |
| ४९ | १५ | नथ बड़ा भारी | नथ बड़ी भारी |
| ४९ | ११ | श्री | श्री |
| ५० | ५ | दाई | दादू |
| …० | १३ | श्रीकिशोरीजी के | श्रीकिशोरीजी की |
| …८ | ५ | श्रीरामानुचार्य्य | श्रीरामानुजाचार्य्य |
| …१ | १७ | गुरु की | गुरुदेव की |
| …२ | १७ | होगा | होगा और कंठी उतारनी होगी। |
|  | २० | 'आपने नहीं' | आपने "नहीं" |
|  | १ | समझाया | समझा |
|  | ८ | हुआ | किया |

| | | | |
|---|---|---|---|
| ९५ | ५ | आप गाड़ी में बिठाकर कोठी आये | आपको गाड़ी में बैठाकर कोठी लाये |
| ९७ | १८ | श्रीगुरुदेवजी | श्रीगुरुदेवजी को |
| ९८ | २१ | वे साधु | वह साधु |
| १०० | ८ | प्रमोद वन | प्रमोद वन में |
| १०१ | १५ | कहेंगे | कहोगे |
| १०२ | १० | शधवाकर | शोधवाकर |
| १०४ | १६ | बड़ा हठ | बड़ी हठ |
| १०४ | २१ | भंडार | भंडारा |
| १०४ | २१ | घराने निर्मल | घराने के निर्मल |
| १०५ | ११ | पद गाया | पद गाये |
| १०५ | १९ | कुरंग | सुरंग |
| १०५ | २० | जाहिरे | जाहिर |
| १०६ | १६ | होता | होगा |
| १०७ | ४ | तब वे | उन्होंने |
| १०७ | ४ | नवांतुक | नवागंतुक |
| १०८ | १४ | अरनिसि | अहर्निसि |
| १०९ | ५ | उतना | उठना |
| ११० | २२ | ममगुरु | ममगुरु गुरु |
| १११ | २० | चंड को दंडपानि | चंडकोदंडपानि |
| ११६ | १४ | कहा कि उसको देखो। उसको | कहा कि "उसको" पुरुष |
| ११८ | ३ | नहीं है | नहीं हैं |
| ११८ | १० | दे दिया | दे दिये |
| ११८ | १५ | हुआ | हुए |
| चित्र | | श्रीस्रीतारामशरणजी | श्रीसीतारमणशरणजी |
| ११२ | २४ | उनके | उनका |
| १२३ | १ | चीजों के अधिकारी हुए | चीजों का अधिकारी हुआ |
| १२३ | १६ | श्रीसीतारामशरण | श्रीसीतारमणशरण |
| १३८ | ३ | १९५८ | १९५८ को |
| १३८ | १० | सुखने | सूखने |
| १३८ | १९ | पुस्तकें के | पुस्तकें |
| १३९ | १२ | चले मये | चले गये |
| १४४ | ८ | लिफाफा | लिफाफे |